Con. 4. VIII-12.49
320

अंक 8
संख्या 12

मंगलवार,
31 मई
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान-सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

प्रतिज्ञा-ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर..... 671

संविधान का प्रारूप (*जारी*)..... 672-735

(अनुच्छेद 131 से 136 पर विचार किया गया)

भारतीय संविधान-सभा

मंगलवार, 31 मई सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 8 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

प्रतिज्ञा ग्रहण एवं रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्य ने प्रतिज्ञा ग्रहण की और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किया;

सरदार रणजीत सिंह (पटियाला और पूर्वी पंजाब रियासत-संघ)।

सेठ गोविन्द दास (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): सभापति जी, मुझे एक बात आपके सामने रखनी है और वह बहुत जरूरी बात मैं समझता हूं। आपको शायद मालूम हुआ होगा कि इस हाउस के कुछ सदस्यों की मोटर कार पर अंग्रेजी की जगह हिन्दी का नम्बर पड़ा हुआ था और उनमें से एक-सदस्य के ऊपर दिल्ली की पुलिस ने उस तख्ती पर हिन्दी का नम्बर होने की वजह से जुरमाना किया है। कुछ सदस्यों के ऊपर इस सम्बन्ध में मुकदमे चल रहे हैं, ऐसा मुझे मालूम हुआ है और यह विषय इस असेम्बली के सदस्यों के प्रीविलेजेज का है और जबकि स्वराज्य हमारे यहां स्थापित हो गया है, ऐसी हालत में हमारी भाषा के नम्बरों के ऊपर मुकदमा चलाना, यह एक बहुत आश्चर्यजनक और लज्जाजनक बात है और इसलिये मैं आपसे कहना चाहता हूं, मैं नहीं जानता कि यह विषय आपके सामने पहले से था या नहीं, लेकिन मैं आपका ध्यान इधर आकर्षित करना चाहता हूं और कहना चाहता हूं कि इस सम्बन्ध में उचित कार्रवाई होनी चाहिये।

श्री मोहनलाल गौतम (संयुक्तप्रान्त : जनरल): सभापति जी, थोड़ी सी सूचना मैं दे दूं और वह यह है कि मैं जब यहां पर से जा रहा था और मेरी जो गाड़ी थी, उस पर यू.पी. का हिन्दी प्लेट पर नम्बर लिखा हुआ था और वह यहां पर काफी दिनों तक रही और केसकर और दूसरे लोगों के पास भी इसी तरह की गाड़ी थी और प्लेट पर हिन्दी का नम्बर था। जब मैं यहां से जा रहा था तो मेरा भी चालान हुआ और यह चालान अभी पैडिंग में है। उसमें क्या होगा, यह मैं नहीं जानता। लेकिन यह वाक्या है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): मैं बोलना चाहता हूं, श्रीमान्!

***अध्यक्ष:** इसी विषय के सम्बन्ध में?

***श्री आर.के. सिधवा:** नहीं, श्रीमान्।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***अध्यक्ष:** मैं इसे निपटा दूंगा। यह एक ऐसा मसला है, जिस पर गौर करना होगा। इसमें क्या कार्रवाई करनी होगी उसके लिये मैं सेक्रेटरी से कहूंगा।

मैं समझता हूं कि पंडित कुंजरू कल की अधूरी बात को पूरा करने के लिये कुछ कहना चाहते हैं।

संविधान का प्रारूप—(*जारी*)
अनुच्छेद 131—(*जारी*)

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** (संयुक्तप्रांत : जनरल): मैं आपका कृतज्ञ हूं श्रीमान्, कि आपने मुझे इस बात का मौका दिया कि कल श्री खेर ने जो सवाल मुझसे किया था उसका जवाब दे सकूं। उन्होंने यह जानना चाहा था कि गवर्नरों को मनोनीत करने का जो संशोधन है, उस के क्या मैं हक में हूं। मैंने कल शुरू में ही यह साफ-साफ बता दिया था कि दो वर्ष पूर्व भी मैंने इस सिद्धांत का विरोध किया था कि उनका चुनाव किया जाये। मनोनीतकरण की व्यवस्था को मैं चुनाव से बेहतर समझता हूं, पर इस व्यवस्था को मैं सन्तोषजनक उसी हालत में समझूंगा, जबकि अनुच्छेद 175 में वैसा संशोधन किया जाये जिसका कि मैंने कल सुझाव दिया है और जिसको कि श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने भी मंजूर किया है। और अनुच्छेद 188 को हटा दिया जाये। अनुच्छेद 188 को हटाने को तो मैं इसलिये कहता हूं कि गवर्नर जो अब मनोनीत किये जायेंगे, उनको मंत्रिमंडल को भंग करने और प्रशासन को अपने हाथ में लेने की शक्ति न रहेगी, जो कि चुने हुए गवर्नर को रहती। अगर ये दो सुधार यहां कर दिये जायें तो मनोनीत गवर्नर रखने के सिद्धांत पर मुझे कोई आपत्ति न रहेगी।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): पं. हृदयनाथ कुंजरू ने अभी यह हवाला दिया है कि मैंने उनके सुझाव को मंजूर करने की बात मान ली है। मैं ऐसी स्थिति में नहीं हूं कि किसी बात को मंजूर करने की बात मान लूं और फिर मेरे मानने का प्रभाव यह नहीं होगा कि सभा के लिये वह लाजिमी हो जाये।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** मैंने यह नहीं कहा कि कृष्णमाचारी साहब ने मसौदा समिति की ओर से या डा. अम्बेडकर की ओर से ऐसा कहा है। मैंने तो केवल अपनी खुशी जाहिर की है कि मेरे मित्र कृष्णमाचारी जैसे वैधानिक विषयों के जानकार व्यक्ति ने भी मेरे सुझाव पर अपनी सहमति प्रकट की।

***अध्यक्ष:** इस अनुच्छेद पर बहस-मुबाहिसा शुरू होने से पहले में माननीय सदस्यों के यह कहूंगा कि विधान पर विचार करने का काम हमें शीघ्रता से करना चाहिये। मैंने सदस्यों को काफी आजादी दी है और बदले में मैं उनसे भी उदारता की आशा रखता हूं, ताकि विधान पर विचार करना हम जल्द से जल्द पूरा कर सकें। कभी-कभी तो मैंने ऐसी भी वक्तृतायें यहां होने दी हैं जिनका विचाराधीन संशोधन से कोई सम्बन्ध नहीं था पर उनको अनुमति मैंने इसलिये दी कि मैं यह अनुभव करता था कि उनके द्वारा जो विचार व्यक्त किये जा रहे हैं, वह शायद अगर उस अनुच्छेद विशेष के प्रसंग में नहीं तो किसी आगामी अनुच्छेद के प्रसंग में विचारणीय हों। इसके अलावा मैं माननीय सदस्यों को यह बात ध्यान में रखने को कहूंगा कि तर्कों की पुनरावृत्ति न होनी चाहिये। अगर

कोई सदस्य यह समझता है कि उनकी किसी बात के लिये और स्पष्टीकरण आवश्यक नहीं है और जो कुछ कहने जा रहे हैं वह सभा के सामने कहा जा चुका है तो उन्हें न बोलना चाहिये। अपनी इस अपील के साथ मैं बहस-मुबाहिसे का काम शुरू करता हूं। आशा है, सदस्यगण मेरी बात का ख्याल रखेंगे।

***डा. पी.के. सेनः** (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, यह स्पष्ट है कि इस प्रश्न पर सभा में जब पहले निर्णय किया गया था तब से उसके सम्बन्ध में सदस्यों में बहुत कुछ विचार परिवर्तन हो गया है। मैं खुद भी यह मंजूर करता हूं कि इस सम्बन्ध में विचार बदलने वालों में मैं भी एक हूं। उस समय विशेषकर जब कि गत बैठक में इस पर निर्णय किया गया था, मुझे अच्छी तरह याद है कि सदस्यों के दिमाग में इस बात का अधिक ख्याल था कि गवर्नर का चुनाव इस तरह हो कि वह प्रशासन में हस्तक्षेप कर सके, अगर दलबंदी के झगड़े और छल-प्रपंच के कारण प्रशासन के भंग या व्यर्थ हो जाने की आशंका पैदा हो जाये, उस समय ऐसा महसूस किया गया था कि राज्यपाल प्रशासन में हस्तक्षेप कर सके, इसके लिये आवश्यक यह है कि उसे इस बात की अनुभूति हो, उसे समूचे प्रांत का समर्थन प्राप्त है। यही कारण था कि इस बात पर कि राज्यपाल किस तरह चुना जाये, बहुत ज्यादा जोर दिया गया था और यह तय किया गया था कि न तो नियुक्ति द्वारा और न मनोनयन द्वारा किसी को राज्यपाल बनाया जाये, बल्कि निर्वाचन में और वह भी प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर किये गये निर्वाचन में जो व्यक्ति चुना जाये वही राज्यपाल बनाया जाये। पर उसके बाद शांति और गंभीरतापूर्वक विचार करने पर अब सदस्यगण इस नतीजे पर पहुंचे गये हैं कि ऐसे आम चुनाव से, जिसमें कि राज्यपाल का प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर चुनाव किया जाये, हर प्रान्त पर बड़ा भारी कार्यभार पड़ जायेगा और उससे उस उद्देश्य की शायद ही कोई सिद्धि हो, जिसके लिये कि इसकी व्यवस्था की जा रही है। आखिर इस व्यवस्था का प्रयोजन क्या है? प्रयोजन यह है कि लोकतंत्रीय सिद्धांतों का पूर्णतः पालन किया जा सके। अब सवाल यह उठता है कि राज्यपाल का प्रशासन में हस्तक्षेप करना क्या लोकतंत्रीय सिद्धांत के अनुकूल होगा या इससे उसका हनन होगा? मैं तो कहता हूं कि राज्यपाल अगर प्रशासन में हस्तक्षेप करता है, तो फिर लोकतंत्रीय व्यवस्था का कोई मतलब नहीं रह जाता है। हमने यह फैसला किया है कि राज्यपाल संवैधानिक रूप से प्रमुख रहेगा। प्रान्त में उत्तम शासन चलाने की समूची जिम्मेदारी प्रान्त के मुख्यमंत्री और उसके मंत्रिमंडल पर रहेगी। प्रशासन विषयक सभी शक्ति मुख्यमंत्री एवं उसके मंत्रिमंडल में निहित रहेगी। ऐसी हालत में अगर ऐसा कोई पदाधिकारी रखा जाता है, जो यह समझता हो कि समूचे प्रान्त का समर्थन उसे प्राप्त है, सुतरां वह प्रान्त के शासन में हस्तक्षेप कर सकता है, तो यह व्यवस्था लोकतंत्र के सर्वथा विपरीत होगी और इससे लोकतंत्र के मूल सिद्धांतों का हनन होगा। ऐसी व्यवस्था होने से तो मुख्यमंत्री और उसके मंत्रिमंडल के लिये यह सम्भव न हो सकेगा कि वह ऐसे उपायों की व्यवस्था कर सके जो उसके ख्याल से प्रान्त के हित में उत्तम हों। सद्यस्कृत्यता की विशेष स्थितियों में ही राज्यपाल को प्रान्त की शासन व्यवस्था में हस्तक्षेप करने की शक्ति होनी चाहिये और वह भी एक थोड़ी अवधि के लिये। यह जरूर है कि सद्यस्कृत्यता सम्बन्धी शक्तियों का प्रयोग राज्यपाल उन्हीं अवस्थाओं और परिस्थितियों में करेगा जहां उसको ऐसा करना उचित हो। किन अवस्थाओं में वह इन शक्तियों का प्रयोग कर सकता है यह विधान में एक स्थल पर बता दिया गया है पर साधारणतः राज्यपाल का प्रकार्य यही रहेगा कि शासन

[डा. पी.के. सेन]

में हस्तक्षेप न करे और सर्वथा तटस्थ रहे। इसलिये लोकतंत्रीय राज्य के हितों का ध्यान रखते हुए और उस संसदात्मक शासन व्यवस्था के हित का ध्यान रखते हुए, जिसे कि हमने अपने विधान का आधार माना है, वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचन द्वारा राज्यपाल को नियुक्त करना सर्वथा अनावश्यक और अनुचित होगा।

राज्यपाल के चुनाव के लिये जो दूसरी व्यवस्था सुझाई गई है, वह यह है कि उसका चुनाव विधान मंडलों द्वारा किया जाये। इस व्यवस्था में भी एक बहुत बड़ी खराबी रहेगी—यह जरूर है खराबी का रूप कुछ दूसरा ही होगा। खराबी यह रहेगी कि मुख्यमंत्री और राज्यपाल के बीच संघर्ष खड़ा हो जायेगा, जिसमें मुख्यमंत्री और उसका मंत्रिमंडल एक तरफ होगा तथा राज्यपाल तथा उसके समर्थक एक ओर होंगे। इसलिये मेरा अपना विश्वास यह है कि यह व्यवस्था संसदात्मक शासन के लिये हितकर होने के बदले मुख्यमंत्री और उसके मंत्रिमंडल के लिये एक कांटा बन जायेगी और ऐसे किन्हीं उपायों का अवलम्बन करने से उन्हें रोकेगी जो प्रान्त के शासन के हित में आवश्यक हों। तो सवाल उठता है कि किया क्या जाये? उत्तर यह है कि हमें कोई दूसरी समुचित व्यवस्था ढूंढनी होगी। अगर हमें इस बात का निश्चय है कि अनुच्छेद 131 में राज्यपाल के निर्वाचन के लिये जो दो तरीके सुझाये गये हैं—इस अनुच्छेद में दोनों तरीकों का उल्लेख है—उनसे हमारे लोकतंत्रीय प्रयोजन की सिद्धि न होगी, तो फिर और दूसरा उपाय क्या हो सकता है? दूसरा उपाय जो हमारे सामने रखा गया है वह यह है कि राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति के हाथ में होगी और परम्परा के अनुसार केन्द्रस्थ प्रधानमंत्री की राय से राष्ट्रपति उसकी नियुक्ति करेगा। इस सम्बन्ध में यहां कई माननीय सदस्यों ने, जिन्होंने कि इस व्यवस्था पर अपने विचार व्यक्त किये हैं, यह कहा है कि राष्ट्रपति के हाथ में इतना अधिकार देना लोकतंत्र के लिये हितकर न होगा। फिर प्रश्न यह है कि कौन सी व्यवस्था अधिक लाभप्रद होगी? निर्वाचन के लिये जो दो तरीके बताये गये हैं, उनके अग्राह्य होने पर राज्यपाल की नियुक्ति का अधिकार हम राष्ट्रपति को दें, या न दें, जिसे प्रधानमंत्री के परामर्शानुसार काम करना होगा। चूंकि राष्ट्रपति प्रान्त के प्रति सर्वथा तटस्थ रहेगा। वह इस सम्बन्ध में इस तरह से काम कर सकेगा, जो प्रान्त के हित के लिये अनुकूल हो, भले ही वह जिस व्यक्ति को नियुक्त करने जा रहा हो वह उस प्रान्त का हो या देश के अन्य किसी भाग का। पर ऐसे व्यक्ति को राज्यपाल बनाने में, जो कि प्रान्त से तटस्थ हो, एक और भी बड़ा लाभ है। मेरा मतलब यह नहीं है कि लाजिमी तौर पर प्रान्त से बाहर का ही आदमी राज्यपाल बनाया जाये। पर अगर ऐसी व्यवस्था रखी जाती है तो उसमें लाभ जरूर है। लाभ यह है कि उसका दिमाग बिल्कुल आजाद रहेगा, सर्वथा तटस्थ रहेगा और वहां के भिन्न-भिन्न वर्गों या विचारों के लोगों से कोई पूर्व सम्पर्क न होने के कारण वह सदा तटस्थ दृष्टि रख सकेगा।

जैसा कि यहां सदस्यों को बताया जा रहा है, राज्यपाल का प्रकार्य यही होगा कि वह शासन व्यवस्था को सुचारू रूप से चलने में सहायता दे। वह शासन व्यवस्था में हस्तक्षेप करने के लिये नहीं होगा बल्कि उसे सुचारू रूप से चलाने में मदद देने के लिये। अगर

राज्य के विभिन्न वर्गों में, विभिन्न सम्प्रदायों में परस्पर कोई मत विरोध है तो उन सभी में ऐक्य स्थापित करना राज्यपाल का काम होगा। मुख्यमंत्री और मंत्रिमंडल के हाथ में जो शासन-व्यवस्था रहेगी उसे सुचारू रूप से चलाने में मदद देना ही राज्यपाल का कर्त्तव्य होगा। राज्यपाल का प्रकार्य यह नहीं होगा कि वह शासन व्यवस्था में हस्तक्षेप करे और अव्यवस्था और गड़बड़ी पैदा करे। असल में राज्यपाल की सृष्टि ही इस उद्देश्य से की जा रही है कि वह शासन की मशीन को सुव्यवस्थित रखे और यह देखे कि उसके कलपुरजे सब ठीक-ठीक चल रहे हैं और यह काम वह हस्तक्षेप द्वारा नहीं बल्कि मित्रवत् परामर्श देकर ही सम्पादित कर सकेगा। राज्यपाल के सम्बन्ध में जब हम ऐसी धारणा रख रहे है, तो हमारा विश्वास है कि सुन्दर शासन के लिये यही अच्छा होगा कि हम सर्वसम्मति से यही निर्णय करें कि राज्यपाल को चुनने का सर्वोत्तम तरीका है राष्ट्रपति द्वारा उसका मनोनीत किया जाना।

***श्री विश्वनाथ दास:** (उड़ीसा : जनरल): अध्यक्ष महोदय, राज्यपाल के चुनाव से सम्बन्ध रखने वाले अनुच्छेद 131 पर बहस-मुबाहिसे के सिलसिले में मैं उन कठिनाइयों को समझ रहा हूं जो कि एक आम निर्वाचन में आ सकती है जिसमें कि समूचे प्रान्त के प्रत्येक बालिग नागरिक भाग लेंगे। बालिग मताधिकार के आधार पर निर्वाचन द्वारा राज्यपाल को चुना जाये, यह एक बड़ी ही कठिन पद्धति होगी और इसमें अवाध्य रूप से बड़ी जटिलतायें पैदा होंगी। इस सम्बन्ध में मसौदा समिति ने जो दूसरा वैकल्पिक सुझाव रखा है, वह भी मुझे सन्तोषजनक नहीं मालूम होता है। इन्हीं सब कारणों से मैंने एक संशोधन की सूचना दी थी—संशोधन नं. 2023 यह संशोधन चाहे जैसा भी हो पर हमें सदस्यों की सामूहिक बुद्धिमता को मानना ही होगा। इस प्रश्न पर बोलते हुए श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने हमारा ध्यान पूर्ववर्ती ब्रिटिश उदाहरण की ओर आकृष्ट किया था। क्या वह ब्रिटेन का एक भी पूर्ववर्ती उदाहरण दे सकते हैं जब कि कोई ब्रिटिश गवर्नर नियुक्त किया गया हो? इस सम्बन्ध में एकमात्र पूर्ववर्ती उदाहरण, जहां तक मैं याद कर पाता हूं, है आयरलैंड के लार्ड लेफ्टिनेंट का। लार्ड लेफ्टिनेंट एक गैर-सरकारी व्यक्ति थे, जिसे मंत्रिमंडल ने सदा मनोनीत किया। ब्रिटिश उदाहरण का हवाला देना तो उस बात के विरुद्ध जायेगा जिसका वह यहां पक्ष प्रतिपादन कर रहे हैं। कनाडा के पूर्ववर्ती उदाहरण का भी यहां उल्लेख उन्होंने किया है, पर मैं उनसे कहूंगा कि जिस पद्धति को हम यहां अपनाना चाहते हैं वह दक्षिणी अफ्रीका की पद्धति से ज्यादा मिलती जुलती है, जहां प्रान्तों में स्वायत्त शासन नहीं के बराबर है। ऐसी स्थिति में श्रीमान्, विधान को शीघ्र पास करने के लिये आप चाहे कितने ही फिक्रमन्द क्यों न हों, माननीय सदस्यों ने जो पथ अपनाया है उसमें देर होना अनिवार्य है। आवश्यक बातें, जिन पर कि सभा विचार कर चुकी थी और जिनको कि वह स्वीकार कर चुकी थी, अब हटाई जा रही हैं। उनमें महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों का अब सुझाव दिया जा रहा है। इन सब बातों के कारण यहां वाद-विवाद होगा ही और वाद-विवाद होने पर विधान के पास होने में देर होना लाजिमी है। इसलिये मैं तो आपसे यही कहूंगा कि हम लोगों ने कोई भी ऐसा काम नहीं किया है, जिसके लिये हमें आप से उपदेश मिलें या जिसके लिये हम आपसे उपदेश का अनुरोध करें, क्योंकि हमने तो कभी यह इच्छा आपके सामने नहीं व्यक्त की है कि इस पर विचार किया जाये कि हमें बोलने का मौका दिया जाये। यहां यह कहा गया है, श्रीमान्, कि राज्यपाल के प्रकार्य बहुत ही

[श्री विश्वनाथ दास]

कम रहेंगे, अगर अपनी नई व्यवस्था में, जिसको कि हम विधान में लिपिबद्ध कर रहे हैं, राज्यपाल के प्रकार्य बहुत ही कम हैं तो फिर उसको आप रखते ही क्यों हैं? राज्यपाल को एक खासी रकम वेतन के रूप में दी जायेगी और भत्ता दिया जायेगा। ऐसी हालत में जो प्रकार्य उसके लिये निर्धारित किये जा रहे हैं, अगर वह बहुत उपयोगी और आवश्यक नहीं हैं और जो रकमें आप उसे देंगे उतने के लायक नहीं हैं, तो मेरी समझ से तो राज्यपाल की व्यवस्था ही को हम हटा दें तो अच्छा है। मेरा दावा तो यह है कि नई व्यवस्था में–अगर सभा इसमें कोई परिवर्तन कर दे तो बात दूसरी है—राज्यपाल में कई निश्चित और महत्त्वपूर्ण शक्तियां सन्निहित रखी गई हैं। अध्यादेश निकालने की शक्ति, किसी विधेयक को विचारार्थ पुनः सभा को लौटाने की शक्ति—अवश्य ही भारत-शासन—अधिनियम 1935 में जिस रूप में यह शक्ति है उससे भिन्न रूप में—मंत्रियों को बरखास्त करने की और निर्वाचन बढ़ाने की शक्ति राज्यपाल में सन्निहित रखी गई हैं। मैं दावे से कहता हूं कि ये सभी शक्तियां जो नई व्यवस्था में राज्यपाल को प्राप्त रहेंगी वह बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। इसलिये विधान में जिन बातों को हम स्वीकार कर चुके हैं, उनमें अगर कोई परिवर्तन किया जाता है तो उसका मतलब यह होगा कि दायित्व के सम्बन्ध में इस समय जो प्रावधान है उनमें बहुत परिवर्तन हो जायेगा। अगर ये शक्तियां चालू रहने दी जाती हैं तो मैं दावें के साथ कहूंगा कि नवीन व्यवस्था में राज्यपाल को बड़ा ही महत्त्वपूर्ण संवैधानिक प्रकार्य सम्पादित करना होगा। इस सम्बन्ध में मुझे बड़ा ही कटु अनुभव मिल चुका है। मैं एक प्रान्त का मुख्यमंत्री था और मुझे मालूम है कि गवर्नर (राज्यपाल) मेरी पार्टी को तोड़ने पर तुला था। मैं जानता हूं कि वह दिन अब चले गये हैं और अब एक नया जमाना आ रहा है। मैं अपने माननीय मित्रों से कहूंगा कि वह भविष्य की ओर देखें। अगर यह बात होती कि हमारे नेता लोग सदा अपने पदों पर बने रहेंगे, पंडित जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेल जैसे महामना व्यक्ति ही देश का कार्यभार सम्भालते रहेंगे, तो इस सम्बन्ध में मुझे कोई भी शिकायत नहीं होती। पर मैं माननीय बन्धुओं से कहूंगा कि मानव जीवन कोई स्थायी चीज नहीं है; हम कितना भी क्यों न चाहें पर मानव जीवन तो अस्थायी ही रहेगा। पार्टियां रहेंगी ही और नई नई पार्टियां बनेंगी। पार्टियों का सदा उत्थान और पतन होता ही रहेगा। विश्व में इतिहास में ऐसे उत्थान और पतन के आपको अनेक उदाहरण मिलेंगे। ऐसी व्यवस्था में मैं माननीय सदस्यों से आग्रह करूंगा कि वह भविष्य का ख्याल रखें और इस बात की ओर ध्यान दें कि जो नई व्यवस्था वह अपनाने जा रहे हैं वह कहां तक सुचारू रूप से काम कर सकेगी।

वह नई व्यवस्था क्या है जो भविष्य में लागू होने जा रही है? भविष्य में जो लोकतंत्रीय शासन-व्यवस्था हम लागू करने जा रहे हैं वह पार्टी प्रणाली के आधार पर चालू की जायेगी। समाचार पत्रों में यह बात दावे के साथ कही गई है कि हमारी व्यवस्थापिका सभा में कोई विरोधी पक्ष वर्तमान में नहीं है, सुतरां कांग्रेस पार्टी जो चाहती है वह पास करती है। मैं इस व्यवस्था से कतई सहमत नहीं हूं और उपरोक्त राय रखने वालों के साथ हूं। इतना जरूर है कि इसकी आलोचना जो भी की जाये, पर यह एक तथ्य है कि लोकतंत्रीय

व्यवस्था देश और राज्य के लिये हितकर हो इसके लिये एक सुसंगठित और सुचारू रूप से काम करने वाली पार्टी-प्रणाली नितांत आवश्यक है। ऐसी हालत में जबकि पार्टी-प्रणाली का अस्तित्व एक मानी हुई बात है, यह कोई नहीं कह सकता कि कौन पार्टी अधिकारारूढ़ हो जायेगी। सम्भव है कि केन्द्र में जो दल अधिकारारूढ़ है उससे सर्वथा एक भिन्न दल किसी प्रान्त में अधिकारारूढ़ हो जाये। ऐसी दशा में क्या स्थिति होगी? अधिनियम के अनुसार तो राज्यपाल संवैधानिक प्रमुख के रूप में रहेगा। उसकी नियुक्ति की जायेगी प्रधानमंत्री की सलाह से, जो एक दूसरी पार्टी का नेता रहेगा। माननीय मित्र श्री खेर ने इस प्रश्न पर बोलते हुए अवश्य ही एक मतलब की, जानकारी की बात कही है। आपने कहा है कि राज्यपाल की नियुक्ति मंत्रिमंडल के परामर्श से की जायेगी। अगर ऐसा होता है—मैं नहीं जानता कि नियुक्ति होगी किस तरह—तो मनोनीतकरण द्वारा उसको नियुक्त करना उतना आपत्तिजनक नहीं रह जाता है। पर अपनी विधानसभा में होने वाले वाद-विवादों से यह प्रकट होता है कि प्रधानमंत्री ही राज्यपाल की नियुक्ति करेगा। आज जो हमारा प्रधानमंत्री है वह विश्व के चन्द महान् पुरुषों में से एक है। उससे तो हम न्याय की आशा कर सकते हैं और करते हैं। उसका अपना कोई स्वार्थ है नहीं, जिसे वह सिद्ध करने का प्रयास करेगा। पर केन्द्र में ऐसा भी प्रधानमंत्री आ सकता है जिसका अपना स्वार्थ हो। अगर राज्यपाल वही बात करना चाहता है जिसका उल्लेख मेरे माननीय मित्र परम विधानवेत्ता डा. सेन ने किया है और प्रान्त के बहुमत प्राप्त दल के शासन में हस्तक्षेप करता है, तो यह एक बहुत ही गम्भीर बात होगी। इसलिये मैं यह अनुभव करता हूं और उनके साथ हूं, जो ऐसा अनुभव करते हैं कि नये विधान में जो व्यवस्था हम रखना चाहते हैं वह हमारे लिये उपयोगी होगी। मैं दावे के साथ कहूंगा कि आप दोनों ही बातें नहीं कर सकते हैं। लोकतंत्रात्मक और एकतंत्रात्मक, इन दोनों व्यवस्थाओं को एक साथ नहीं चालू रख सकते हैं। प्रान्त में जो शासन-व्यवस्था आप रखने जा रहे हैं वह पांव से गर्दन तक तो लोकतंत्रीय रहेगी, पर सिर होगा उसका एकतंत्रात्मक। आपकी इस व्यवस्था का असफल होना अनिवार्य है। इस व्यवस्था को रखकर आप कलह पैदा करने जा रहे हैं। मैं यह जानता हूं कि इस व्यवस्था के विरुद्ध मैं अपना मत नहीं दूंगा, क्योंकि जैसा मैं कह चुका हूं मैं सभा की सामूहिक बुद्धिमत्ता के सामने सर झुकाऊंगा ही। पर भविष्य में इस व्यवस्था का क्या परिणाम होगा इसके बारे में मैं अपनी राय जरूर ही यहां साफ-साफ बता देना चाहता हूं और उसे दर्ज करा देना चाहता हूं। मुझे इसका अनुभव मिल चुका है और मुझे इसमें रंचमात्र संदेह नहीं है कि इसके सम्बन्ध में मेरा जो अनुभव रहा है उसी की पुनरावृत्ति अब होगी। माननीय सरदार पटेल अगर यहां मौजूद होते तो मैं बताता कि गवर्नर जो ब्रिटिश साम्राज्यवाद का यहां एजेंट था, किस तरह हमारी पार्टी को तोड़ने का सतत प्रयास करता रहा। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के अधीन गवर्नर जो कुछ किया करते थे, उसी की पुनरावृत्ति अब अधिकारारूढ़ दल करेगा। पर इतना जरूर मैं निःसंकोच कहूंगा कि हमारे नेता उतना नीचे हर्गिज न गिरेंगे और न उस रूप में काम करने की कल्पना ही करेंगे जिसमें कि पूर्ववर्त्ती शासन करता था।

हमें यह बताया जा रहा है कि प्रान्तों में ऐक्य लाने के जो उपाय हैं, उनमें यह भी एक है। पर इस व्यवस्था से आप ऐक्य कैसे ला सकते हैं? यह असम्भव है। इन कार्यों द्वारा आप ऐक्य कभी ला नहीं सकते हैं अपने माननीय मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद

[श्री विश्वनाथ दास]

की बात तो मैं समझ सकता हूं। वह शुद्ध एकतंत्रात्मक व्यवस्था के हामी हैं। वह तो यह चाहते हैं कि समूचा विधान फाड़ कर फेंक दिया जाये। लोकतंत्रात्मक व्यवस्था में उनको कोई विश्वास नहीं है। उनके विचारों से मैं सहमत नहीं हूं पर उनके विचारों का आदर करता हूं। जैसा कि मैं कह चुका हूं, आप दोनों ही बातें नहीं पा सकते हैं। लोकतंत्रात्मक और एकतंत्रात्मक दोनों व्यवस्थायें आप साथ-साथ नहीं चला सकते हैं मेरे माननीय मित्र यह फरमाते हैं कि केन्द्रस्थ प्रधानमंत्री तो भारतीय जनता के प्रति उत्तरदायी होगा इसलिये वह अगर किसी व्यक्ति को राज्यपाल मनोनीत करता है तो इसे आप एकतंत्र नहीं कह सकते हैं। पर यह बात लोकतंत्रीय भी नहीं कही जा सकती है। भले ही प्रधानमंत्री की सलाह पर राष्ट्रपति ही किसी को मनोनीत करें, पर प्रधानमंत्री जिस व्यक्ति को कहेगा उसी को राष्ट्रपति मनोनीत करेगा और यह व्यवस्था कभी भी लोकतंत्रामक नहीं कही जा सकती है। हम गांवों के निवासियों को अधिकार दे रहे हैं। हम ग्राम-पंचायतों को संगठन करने जा रहे हैं। आप पंचायत को यह अधिकार दे रहे हैं कि वह अपना प्रधान चुन ले। क्या विधान में यही अधिकार आप विधानसभा को नहीं देंगे? माननीय मित्र श्री रामालिंगम चेटियर तो एक कदम और आगे बढ़ गये हैं। आप यह चाहते हैं कि जिला बोर्डों और म्युनिसिपल क्षेत्रों को चुनाव के इलाके में शामिल करके प्रान्तों के निर्वाचक समूह का आकार और बढ़ा दिया जाये। प्रश्न का यह पहलू यह भी है, जिसके सम्बन्ध में एक उपाय के लिये हमें खोजना पड़ सकता है। पर इस बात को सभा ने अस्वीकार ही कर दिया है। न इस बात के लिये मैंने कोई वकालत ही यहां की थी और न मुझे इसके अस्वीकृत होने का खेद है। मेरा कहना यह है कि सभा अगर एक निर्वाचित व्यक्ति को राज्यपाल के रूप में रखना चाहे तो उसे इस अधिकार से आप इन्कार नहीं कर सकते है और इन्कार करने का आप कोई औचित्य भी नहीं बता सकते हैं। माना, आपका यह कहना सकारण हो सकता है कि वयस्क मताधिकार के आधार पर चुना हुआ एक राज्यपाल भी हो और एक दायित्वपूर्ण प्रधानमंत्री भी हो, ऐसी व्यवस्था कहीं नहीं वर्तमान है, सुतरां यह अवांछनीय है। आपके इस कहने में औचित्य हो सकता है, पर अगर सभा निर्वाचित राज्यपाल रखने का फैसला करती है तो आप कैसे रोक सकते हैं? सन् 1947 के अधिवेशन में जब इस प्रश्न पर यहां विचार किया गया था तो मैंने सदस्यों से आग्रह किया था कि यह व्यवस्था उचित नहीं होगी, पर मेरी बात मानी नहीं गई और जैसा कि मैंने बतलाया है कि मैं पार्टी और सभा की संयुक्त बुद्धिमत्ता के आगे नतमस्तक हो जाता हूं, मैंने सभा के निर्णय को स्वीकार किया था। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यह सभा और इसके माननीय सदस्य इस बात के लिये बहुत मशहूर हो चले हैं कि वह अपने निर्णयों का सदा बदला करते हैं। हमने एक समिति नियुक्त की थी। माननीय सरदार पटेल जैसा व्यक्ति उसका सभापति था। उस समिति की सर्वसम्मत सिफारिशों को हमने विधान के मसौदे में स्थान दिया। इस प्रश्न पर सभा ने पहले ही खूब बारीकी से सोच विचार कर लिया था और तब उसे मसौदा-समिति के पास भेजा था। और आज विधानान्तर्गत रखी हुई व्यवस्था में हम इतना बड़ा परिवर्तन करने का प्रस्ताव रख रहे हैं। अगर आप पूर्व निर्णीत व्यवस्था को बदलते हैं तो मेरे ख्याल में यह उन सदस्यों के प्रति अन्याय होगा जो लोक अनुपस्थित रह गये हैं, यह समझते हुए कि विधान में अब कोई मौलिक परिवर्तन नहीं किया जायेगा।

***अध्यक्षः** इस आशा में कि उसके मत की आवश्यकता न पड़ेगी, किसी भी सदस्य को अनुपस्थित होने का अधिकार नहीं है। हर सदस्य से यही आशा की जाती है कि वह अपनी जगह पर मौजूद रहेगा। श्री विश्वनाथ दास अभी यह कह रहे थे कि कुछ सदस्य यह सोचकर गैर-हाजिर रह गये कि मसौदा ज्यों का त्यों मंजूर कर लिया जायेगा। इसीलिये मैंने यह बता दिया है कि किसी भी सदस्य को मसौदे की किसी बात के सम्बन्ध में यह नहीं मान लेना चाहिये कि वह ज्यों का त्यों रह जायेगा। सभा की बैठक में उपस्थित रहना उसका फर्ज है।

***श्री विश्वनाथ दासः** इसके लिये मैं अध्यक्ष महोदय का कृतज्ञ हूं और साथ ही उस सदस्य का भी कृतज्ञ हूं जिसने मेरी बात का विरोध किया है। पर यह सोचना कि जब सभा में मसौदे की किसी बात पर एक बार पूरी तरह विचार हो चुका है, तो पुनः उसमें कोई मौलिक परिवर्तन नहीं किया जायेगा, क्या गलत होगा?

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती** (मद्रास : जनरल): बिल्कुल ही गलत होगा।

***एक अन्य माननीय सदस्यः** अगर यह गलत नहीं है तो आप आये ही यहां क्यों?

***श्री विश्वनाथ दासः** एक-दूसरे मित्र मुझसे यह पूछ रहे हैं कि मैं यहां आया ही क्यों? हम सब यहां क्यों आये हैं इसे वह भी जानते हैं और मैं भी जानता हूं। अस्तु, इस भाष्य को मानकर मैं चलने को तैयार नहीं हूं। इस प्रश्न के सम्बन्ध में मेरी क्या अनुभूति है उसे यहां व्यक्त करना मैं अपना कर्त्तव्य और दायित्व समझता हूं। मैं यह भी बता दूं कि उड़ीसा प्रान्त के और अन्तर्गत के राज्यों से आये हुये भी प्रतिनिधियों से मैंने इस सम्बन्ध में परामर्श कर लिया है और वह सभी मेरे इस ख्याल से सहमत हैं कि यह व्यवस्था सुचारू रूप से नहीं काम कर सकेगी।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं उस संशोधन का समर्थन करने के लिये खड़ी हो रही हूं, जिसे माननीय मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने पेश किया है और जिसका समर्थन माननीय मित्र कामत ने किया है। मैं उसे स्पष्ट रूप से स्वीकार करूंगी। एक अरसा तक मेरी भी यही राय थी कि प्रत्यक्ष निर्वाचन की प्रणाली इस सम्बन्ध में अन्य प्रणालियों के मुकाबले में ज्यादा अच्छी होगी। पर अब इस सम्बन्ध में मैंने अपनी राय बदल दी है। जिन लोगों ने इस प्रश्न पर विचार किया है और इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि राज्यपाल को मनोनीत या नियुक्त करने का जो सुझाव इस संशोधन में रखा गया देखती है, वह हमारी वर्तमान परिस्थिति में अन्य किसी व्यवस्था से जरूर अच्छा है, उन में मैं भी एक हूं। मैं यह देखती हूं, श्रीमान्, कि जिन मित्रों ने राष्ट्रपति द्वारा राज्यपाल के मनोनीत किये जाने के प्रस्ताव का विरोध किया है, उन्होंने दो कारणों से ही उसका विरोध किया है। उनका कहना है कि यह व्यवस्था लोकतंत्रीय सिद्धांतों से सामंजस्य नहीं रखती है और साथ ही इससे राष्ट्रपति को लोकतंत्रीय आदर्श को बड़ी क्षति पहुंचेगी, अगर राज्यपाल के निर्वाचन में जनता मताधिकार के प्रयोग से वंचित रखी जाती है और लोकतंत्र की आधारभूत इस विचारधारा का कि प्रत्येक नागरिक को मताधिकार के प्रयोग का अधिकार होगा, सर्वथा हनन हो जायेगा, अगर राष्ट्रपति को यह शक्ति दे दी जाती है, मैं यह निवेदन

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

करूंगी कि किसी भी व्यवस्था की उपयोगिता या अनुपयोगिता को आखिर आप उसके परिणामों से ही तो जाचेंगे। कुछ ऐसे प्रकार्य हैं जिनको राज्यपाल सम्पादित करेगा। हम विधान में राज्यपाल की व्यवस्था इसलिये चाहते हैं कि हमारा यह ख्याल है कि इस व्यवस्था से प्रान्त में सुव्यवस्था रहेगी और अगर राज्यपाल अपने प्रकार्यों और दायित्वों के प्रति जागरूक है तो इस व्यवस्था से जनता के परस्पर विरोधी वर्गों में एक ऐक्य और समन्वय स्थापित हो सकेगा। इसी उद्देश्य से ही इस व्यवस्था का प्रस्ताव रखा जा रहा है। इसके पीछे मूलभूत कल्पना यह है कि राज्यपाल को दलगत राजनीति से, पार्टी के प्रपंच से ऊपर रखा जाये। मसौदे के अनुच्छेद 135 के एक खंड में यह कहा गया है कि राज्यपाल किसी भी सदन (हाउस) का सदस्य न रहेगा और अगर कोई ऐसा व्यक्ति इस पद के लिये चुना जाता है, जो किसी सदन का सदस्य है, तो चुने जाने के पूर्व उसे अपनी सदस्यता से इस्तीफा देना होगा। इस व्यवस्था के पीछे मूलभूत विचार यह है कि राज्यपाल दलबन्दी की राजनीति और झगड़ों से ऊपर रहे। मैं पूछती हूं कि अगर राज्यपाल को जनता की मरजी पर पार्टी के निर्णयों के अधीन रखा जाता है, तो आपकी यह कल्पना कि वह सर्वथा तटस्थ रहेगा, कभी पूरी हो सकती है? इसलिये मैं तो यह अनुभव करती हूं कि इस संशोधन के मुकाबले में जिस अन्य प्रणाली को अपनाने का सुझाव यहां कुछ सदस्य दे रहे हैं वह बहुत खतरनाक है। इस संशोधन का विरोध करने वाले मित्र ने इसके खिलाफ दूसरी बात यह पेश की है कि इससे राष्ट्रपति को आवश्यकता से अधिक शक्ति मिल जाती है। मैं पूछती हूं कि किसी व्यक्ति को राज्यपाल पद के लिये पसन्द करने के पहले इस सम्बन्ध में क्या राष्ट्रपति प्रधानमंत्री से और प्रधानमंत्री अपने मंत्रिमंडल से परामर्श न करेगा? जो लोग मनोनीत राज्यपाल की नियुक्ति के पक्ष में हैं, उन्होंने कल यह कहा था कि इस व्यवस्था से एक बहुत ही सुखद और उपयोगी परम्परा यह चालू हो जायेगी कि इस बारे में प्रान्त के मुख्यमंत्रियों से परामर्श लिया जाने लगेगा। मेरा तो ख्याल है कि यह परम्परा चालू हो चुकी है और अब विकास पाती जा रही है। जब भी कहीं गवर्नर की नियुक्ति करनी होती है तो उस प्रान्त के मुख्यमंत्री से अनिवार्य रूप से परामर्श लिया ही जाता है। इसलिये मैं समझती हूं कि मित्रों की यह जो आशंका है कि राष्ट्रपति अपने दायित्वों का पालन राष्ट्रहित का ध्यान रखते हुए अच्छी तरह न करेगा, यह सर्वथा निराधार है। इसलिये इस सम्बन्ध में समूची जिम्मेदारी राष्ट्रपति पर छोड़ देने में कोई आशंका नहीं है। जब राष्ट्रपति इन दायित्वों का पालन उतनी सतर्कता से करेगा तो इनको उस पर छोड़ देने में मुझे तो खतरे का कारण कोई नहीं दिखाई देता है। मैं अपने माननीय मित्रों को यह भी बता दूं कि जो व्यक्ति इतने महान् दायित्व का कार्यभार ग्रहण करेगा वह यों ही नहीं ग्रहण करेगा, बल्कि खूब सोच विचार कर लेने के बाद ही ग्रहण करेगा क्योंकि वह जानता है कि उसे श्री रोहिणी कुमारी चौधरी, श्री विश्वनाथ जैसे मित्रों की आलोचना का मुकाबला करना पड़ेगा, जो इस प्रस्ताव के खिलाफ हैं और राष्ट्रपति को यह अधिकार देने में डरते हैं। इसलिये मैं यह कहूंगी कि इसमें खतरे की कोई बात नहीं है और अगर कोई अवांछनीय व्यक्ति इस पद के लिये मनोनीत किया जाता है तो लोग जाकर राष्ट्रपति से यह कह सकते हैं कि वह व्यक्ति अवांछनीय क्यों है और किन कारणों से उसे हटा देना चाहिये?

इसलिये मैं तो यही अनुभव करती हूं, मनोनीतकरण द्वारा राज्यपाल को नियुक्त करने में कोई खतरा नहीं है और मित्रों से इस बात के लिये आग्रह करूंगी कि यहां यह तर्क जो रखा गया है कि वर्तमान स्थिति में इससे अधिक सुन्दर और सुरक्षामूलक व्यवस्था दूसरी कोई हो नहीं सकती है, उससे उन्हें यकीन हो जाना चाहिये। खुद मसौदा-समिति ने इस सम्बन्ध में अब अपना विचार बदल दिया है और वैकल्पिक सुझाव यह रखा है कि सदनों द्वारा निर्वाचित चार अभ्यर्थियों की तालिका में से किसी एक को राज्यपाल नियुक्त किया जाये। जो वैकल्पिक व्यवस्था सुझाई गई है वह निराली है और दुनिया में कहीं भी इस तरह की व्यवस्था नहीं चालू है। और फिर गुणागुण के आधार पर भी इस तालिका-व्यवस्था की कोई वकालत नहीं की जा सकती है। मैं तो यह कहूंगी कि इन व्यवस्था में जिम्मेदारी किसी एक पर नहीं रहेगी। इसमें जिम्मेदारी बंटी रहेगी और ऐसी व्यवस्था के जो दुर्गुण हो सकते हैं वह सब इसमें रहेंगे। इसमें दायित्व न तो राष्ट्रपति पर रह जायेगा न केन्द्रीय मंत्रिमंडल पर और न प्रान्तीय मंत्रिमंडल पर, क्योंकि इस व्यवस्था में दायित्व कइयों में बंटा रहेगा। इस तालिका-प्रणाली में खतरा इस बात का है कि चारों उम्मीदवारों को अगर समान संख्या में मत न मिले, जो कि लाजिमी है, तो उस हालत में अगर राष्ट्रपति किसी ऐसे व्यक्ति को चुन लेता है, जिसे कम मत प्राप्त हुए हैं, तो उस व्यक्ति और प्रान्तीय विधान मंडल में संघर्ष पैदा हो जायेगा। ऐसी हालत में स्वाभाविक है कि वह जिम्मेदारी लेना न चाहेगा। अन्ततोगत्वा परिणाम यह होगा कि खुद सभा को ही उस का चुनाव करना होगा। चुनाव हो या नियुक्ति, अगर वह सभा द्वारा ही होती है तो मैं नहीं समझती कि उसमें कोई महत्त्व है।

मैं यह भी कहना चाहती हूं कि अनुपाती प्रतिनिधान की पद्धति अपनाने से वस्तुस्थिति में कोई सुधार नहीं आ जायेगा। इस पद्धति को अपनाने का परिणाम यही होगा कि समूची सभा दलों में बंट जायेगी और वह यहां परस्पर संघर्ष करने लगेंगे। फ्रांसीसी प्रणाली के सारे दुर्गुण और सारी असुविधायें इससे पैदा हो जायेंगी। हमारे कई विश्वविद्यालयों में तालिका प्रणाली का और उसके आधार पर नियुक्ति का प्रयोग किया जा चुका है, पर इन प्रयोगों का परिणाम ऐसा नहीं रहा है कि हम कह सकें कि यह पद्धति वहां अच्छी तरह कारगर रही है। इस पद्धति पर जो भी व्यक्ति नियुक्त किया गया, बाद मैं उसे अपदस्थ होना पड़ा। परिणाम यही हुआ कि हारे हुए उम्मीदवार ने एक विरोधी पक्ष कायम कर लिया और वाइस चान्सलर के सामने बड़ी ही मुसीबतें पैदा कीं। इसलिये मैं कोई कारण नहीं देखती कि हम इस सीधी-साधी प्रणाली को क्यों न अपनायें जिससे राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति करे। इन शब्दों के साथ, श्रीमान्, मैं श्री ब्रजेश्वर प्रसाद के संशोधन का हार्दिक समर्थन करती हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस खंड को विधान के महत्त्वपूर्ण खंडों में से एक मानता हूं। हमने अपने विधान की जो रूपरेखा तैयार की है वह ब्रिटिश विधान के आधार पर तैयार की है। ब्रिटिश विधान में एक सम्राट की व्यवस्था है और अपने विधान में उसकी जगह हमने एक राष्ट्रपति रख दिया है। विधान में सम्राट को कोई प्रकार्य नहीं दिये गये हैं। वह एक शून्य के समान है, पर एक ऐसे

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

शून्य के जो कि अंकों के दाहिनी ओर है। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि इंग्लैंड की राजनीति में सम्राट एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है और वहां की राजनीति पर उसका प्रबल प्रभाव पड़ता है। इसलिये मेरा कहना तो यही है कि जब हम अपना विधान ही ब्रिटिश विधान के आधार पर बना रहे हैं, तो राष्ट्रपति और राज्यपालों को हमें वही महिमा देनी चाहिये जो इंग्लैंड में सम्राट को प्राप्त है। मैं यह अनुभव करता हूं कि अगर हमारे राज्यपालों को राष्ट्रपति मनोनीत करता है तो उसे सम्राट की सी महिमा कदापि नहीं प्राप्त हो सकती है। यह महिमा तो उसे तभी प्राप्त हो सकती है, जब वह वयस्क मताधिकार के आधार पर जनता द्वारा चुना जाये। सम्राट को इंग्लैंड में जो महिमा प्राप्त है वह वहां और किसी भी व्यक्ति को नहीं प्राप्त है। ऐसी हालत में अगर हम अपने विधान को ब्रिटिश नमूने के आधार पर रखते हैं, तो हमें यह न भूलना चाहिये कि राज्यपाल को केवल नाममात्र का प्रमुख न बनाना चाहिये बल्कि उसे वही महिमा और प्रतिष्ठा प्राप्त रहनी चाहिये जो इंग्लैंड में सम्राट को प्राप्त है। वर्तमान में तो सभी प्रान्तों के गवर्नरों (राज्यपालों) को केन्द्रीय सरकार ने ही नियुक्त किया है, पर उन्हें वह प्रतिष्ठा नहीं प्राप्त है जो उनके लिये अपेक्षित है। मैं जानता हूं कि अगर जनता द्वारा उनका निर्वाचन होता तो उनमें से बहुत तो चुने ही नहीं जाते। मेरे ही प्रान्त में इसके लिये जो नियुक्ति हुई है उससे मैं खुश नहीं हूं। और यह भी महसूस करता हूं कि अगर चुनाव के जरिये इस पद की पूर्ति की जाती, तो जो सज्जन इस समय वहां पदस्थ है वह हर्गिज न आ पाते। अगर यह पद्धति जारी रखी गई तो इससे यह होगा कि ब्रिटिश नमूने के आधार पर निर्मित अपने विधान का जो मूल उद्देश्य है वही खत्म हो जायेगा।

राज्यपाल को आम निर्वाचन द्वारा चुनने के विरुद्ध एक तर्क यह भी रखा गया है कि निर्वाचित राज्यपाल की प्रतिष्ठा मुख्यमंत्री से ऊंची रहेगी और उसके फलस्वरूप दोनों में संघर्ष होगा। मैं नहीं समझता कि ऐसा क्यों होगा। दोनों ही पदों के लिये जो व्यक्ति निर्वाचित किये जायेंगे, वह देशभक्त होंगे और प्रान्त एवं देश के प्रति उनके दिल में प्रेम होगा। पदासीन रहते हुए दोनों ही सदा यह उदाहरण उपस्थित करने का प्रयास करेंगे कि प्रान्त के हित में यह सचेष्ट होकर काम कर सकते हैं। अपने उच्च पदों पर आसीन रहते हुए दोनों ही यह दिखायेंगे कि वह अपनी व्यक्ति धारणाओं में सामंजस्य पैदा कर सकते हैं और प्रान्त के हित में मिलकर काम कर सकते हैं मैं कोई कारण नहीं देखता कि उनके बीच संघर्ष क्यों पैदा होगा। ज्यादा करके सम्भावना इसी बात की है कि मुख्यमंत्री और राज्यपाल दोनों ही बहुसंख्यक दल के समर्थन पर चुने जायेंगे, इसलिये सम्भवत: दोनों एक ही दल के होंगे। और अगर वह एक दल के नहीं भी हैं जो कि तभी सम्भव है जबकि दलों का पलड़ा बराबर हो और एक दल का मुख्यमंत्री हो और दूसरे का राज्यपाल हो—उस हालत में भी दोनों दलों को परस्पर सहयोग देना होगा। जब दोनों दलों में परस्पर सहयोग भाव रहेगा तो इससे मतदाताओं में सहयोग भाव आना निश्चित है और इस तरह प्रान्त को यह लाभ पहुंचेगा कि सदन के दोनों दलों में सहयोग रहेगा। इसलिये उनमें संघर्ष की आशंका करना बिल्कुल निराधार होगा। ये दोनों उच्च व्यक्ति, जिनको समूचा प्रान्त चुनेगा, अवश्य ही इतने बुद्धिमान होंगे कि प्रान्त की भलाई के लिये ही अपनी सारी योग्यता का

उपयोग करेंगे। वह आपस में कदापि न लड़ेंगे और हमेशा यही कोशिश करेंगे कि प्रान्त की भलाई के आगे अपने झगड़ों को तुच्छ समझा जाये।

फिर यहां यह कहा गया है कि हमें यह डर न होना चाहिये कि केन्द्र को आवश्यकता से अधिक अधिकार प्राप्त हो जायेंगे। राष्ट्रपति को हमने और भी बहुत से व्यापक अधिकार दिये हैं और यह कहा है कि इतने व्यापक अधिकार उसे इसलिये दिये जा रहे हैं कि वह किसी दल विशेष का व्यक्ति न होगा। देश के सभी विधान मंडल मिलकर उसका चुनाव करेंगे। वह किसी दल का व्यक्ति न होगा। प्रधानमंत्री की राय से ही वह सदा काम करेगा। इस तरह जो पार्टी केन्द्र में अधिकारारूढ़ रहेगी वही प्रान्तों के राज्यपालों को मनोनीत करेगी। वही सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को भी नियुक्त करेगी। पर यह अच्छी बात न होगी। मैं कभी भी इस राय से सहमत नहीं हो सकता हूं कि इन सभी उच्च पदाधिकारियों को मनोनीत करने की शक्ति एक व्यक्ति में सन्निहित रखी जाये। हमें यह याद रखना चाहिये कि किसी को भी सर्वाधिकार देना अच्छा नहीं होता है। इससे आदमी सर्वथा भ्रष्ट हो जाता है। अगर हम एक व्यक्ति, प्रधानमंत्री को ये सब अधिकार दे देते हैं, तो चाहे वह व्यक्ति कितना भी अच्छा क्यों न हो—और फिर यह जरूरी नहीं है कि सभी प्रधानमंत्री हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री के समान ही श्रेष्ठ व्यक्ति हों और हो सकता है कुछ ऐसे भी हों जो अपनी शक्ति का दुरुपयोग करें—यह एक खतरनाक बात होगी। प्रधानमंत्री के परामर्श से राज्यपाल मनोनीत करने की शक्ति राष्ट्रपति को देना ठीक न होगा। हम यह प्रावधान भी कर रहे हैं कि सद्यस्कृत्यता की दशा में राज्यपाल को प्रान्त की शासन-व्यवस्था को अपने हाथ में लेने का अधिकार रहेगा। जब तक कि प्रान्त की जनता का विश्वास उसे प्राप्त न रहे वह ऐसा कर नहीं सकता है। और जनता का विश्वास उसे तभी प्राप्त रह सकता है, जबकि उसका निर्वाचन जनता द्वारा हो। अगर जनता द्वारा वह निर्वाचित नहीं रहता है, तो सद्यस्कृत्यता की दशा में उसे शासन की बागडोर जनता लेने ही न देगी। इसलिये जनता द्वारा निर्वाचित तो राज्यपाल को होना ही चाहिये।

यहां यह कहा गया है कि केन्द्र को प्रान्तों पर पूरा अधिकार प्राप्त रहना चाहिये। अगर आपका विचार यह होता है कि विधान एकात्मक शासन-व्यवस्था के अनुरूप हो, तो उस सूरत में तो मैं केन्द्र को सर्वाधिकार सम्पन्न बनाने का समर्थन करता। पर हमारा जो विधान बन रहा है, उसके अनुसार तो हमें प्रान्त की जनता की देशभक्ति पर ही यह बात छोड़नी पड़ेगी कि वह इस तरह चलें और यह कोशिश करें कि केन्द्र शक्तिशाली रहे और वह केन्द्र के अनुकूल काम करें। और जब जनता के ऊपर इस बात को आप छोड़ देते हैं, तो वह यही कोशिश करेंगे कि राज्यपाल ऐसा व्यक्ति हो जो केन्द्र के अनुकूल काम करे, देश हित का ध्यान रखते हुए कि अपने प्रकार्यों को पूरा करे। हमें जनता और उसकी देशभक्ति पर भरोसा करना ही होगा।

यहां यह कहा गया है कि वयस्क मताधिकार के आधार पर राज्यपाल का निर्वाचन करना एक बड़ा कठिन काम होगा। पर यह तो हम जानते हैं कि सभी धारा सभाओं के सदस्यों का चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर ही किया जायेगा। सदस्यों के

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

चुनाव के साथ ही हम राज्यपालों का भी चुनाव कर सकते हैं। मैं तो यही कहूंगा राज्यपाल की शक्तियां ऐसे ही व्यक्ति को कभी न मिलनी चाहिये जिसे जनता का विश्वास न प्राप्त हो। डा. अम्बेडकर के मूल सुझाव को ही हमें मंजूर करना चाहिये।

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस बहस में, इस मौके पर मैं दखल न देता पर माननीय मित्र श्री विश्वनाथ ने जो बातें कही हैं उन्हीं की वजह से मुझे दखल देना पड़ रहा है। अगर इस समय सभा के सामने इस नये संशोधन के सम्बन्ध में सारी स्थिति पर प्रकाश नहीं डाल दिया जाता है, तो मुझे डर है कि सम्भवत: उनकी बातों का गलत अर्थ लगा लिया जायेगा।

सदस्यों को याद होगा कि जब सन् 1947 में इस प्रश्न पर संघ-संविधान-समिति और प्रान्तीय संघ-संविधान-समिति (Union Constitution Committee & the Provincial Union Constitution Committee) की संयुक्त बैठक में विचार किया गया था, तो इस पर परस्पर दो विरोधी मत थे। यह बात है संविधान सभा के प्रारम्भिक काल की। एक मत तो यह था कि अमेरिकन विधान के आधार पर हमें अपना विधान तैयार करना चाहिये और दूसरा मत यह था कि ब्रिटिश नमूने पर हमें अपना विधान बनाना चाहिये। एक समय ऐसा भी आया था कि बैठक में सदस्यों की राय कभी एक पक्ष की ओर झुकती थी और कभी दूसरे पक्ष की ओर। पर अन्ततोगत्वा आम राय ब्रिटिश प्रणाली के पक्ष में रही और लोगों को यही पसंद रहा कि केन्द्र और प्रान्त, दोनों के सम्बन्ध में ब्रिटिश पद्धति ही अपनाई जाये।

कुछ लोग इन दोनों पक्षों के बीच का मार्ग पसंद करते थे। महसूस यह किया जा रहा था कि अगर किसी समय केन्द्र या प्रान्त में एक बहुमत रखने वाली हुकूमत को कायम करना असम्भव हो और राजनैतिक दल कई टुकड़ियों में बंटे हों, तो उस सूरत में वयस्क मताधिकार के आधार पर चुना गया राष्ट्रपति और राज्यपाल, जिसे जनता का समर्थन प्राप्त होगा, हुकूमत में स्थैर्य ला सकेंगे।

पर जब इस योजना पर विचार किया जाने लगा तो एक विचित्र ही स्थिति पैदा हो गई। केन्द्र के सम्बन्ध में तो यह योजना नहीं स्वीकार की गई और यह तय हुआ कि केन्द्रस्थ राष्ट्रपति को संवैधानिक प्रमुख की स्थिति प्राप्त रहनी चाहिये और वयस्क मताधिकार के आधार पर समूचे राष्ट्र द्वारा उसका निर्वाचन न होना चाहिये, पर जहां तक राज्यपाल का सम्बन्ध है, योजना को मंजूर कर लिया गया। इस तरह राष्ट्रपति और राज्यपाल को वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनने की जो योजना इस उद्देश्य से रखी गई थी कि देश में उन्हें ऐसी प्रतिष्ठा और शक्ति प्राप्त रहे कि वह शासन स्थैर्य ला सकें, वह टूट गई।

ब्रिटिश नमूने का अपनाने पर अगर हम राज्यपालों को वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनने का प्रावधान करते हैं, तो यह एक असंगत बात होगी। यह बिल्कुल एक ही असामयिक और वाहियात व्यवस्था होगी। प्रान्त के नागरिकों द्वारा वयस्क मताधिकार के

आधार पर जो राज्यपाल चुना जायेगा उसकी आप कल्पना तो कीजिये। प्रान्त के राजनैतिक जीवन में जिनको शीर्षस्थान प्राप्त रहेंगे, वे तो मुख्यमंत्री या मंत्री बनना चाहेंगे क्योंकि उनके हाथ में काफी अधिकार रहेंगे। इसलिये अधिकारारूढ़ पार्टी चुनाव के समय राज्यपाल के पद के लिये एक ऐसे ही व्यक्ति का नाम रखेगी जो मंत्रिपद के अभ्यर्थियों से कम महत्त्व रखता हो। इसका परिणाम यह होगा कि दल का सर्वोत्तम व्यक्ति राज्यपाल पद के लिये उपलब्ध न हो सकेगा। चुनाव के सिलसिले में प्रान्त को जो खर्च बैठेगा और जो कार्यशक्ति लगेगी, वह सब दल के एक गौढ़ व्यक्ति को ही शासन प्रमुख बनाने में बेकार सर्फ होगी। प्रान्त का मुख्यमंत्री ही उसे नामदज करेगा इसलिये यह लाजिमी है कि मुख्यमंत्री से उसका महत्त्व कम होगा। ऐसी सूरत में कोई कारण नहीं है कि चुनाव के इतने बड़े तमाशे का आयोजन क्यों किया जाये।

गत अप्रैल माह में दोनों समितियों की फिर बैठक हुई जिसमें इस प्रश्न पर विचार किया गया। आखिरी तौर पर यह तय पाया कि चूंकि शासन में राज्यपाल का नियंत्रण रहेगा इसलिये निर्वाचित राज्यपाल की व्यवस्था करना बेकार है। ऐसा सोचा गया और ठीक ही सोचा गया कि मुख्यमंत्री विधानसभा में बहुमत प्राप्त दल के नेता के रूप में रहेगा और पार्टी का कोई व्यक्ति, प्रान्त के सभी वयस्क नागरिकों द्वारा राज्यपाल के रूप में निर्वाचित हो जाता है, तो ऐसी सूरत में अगर इन दोनों में कोई संघर्ष खड़ा होता है, तो राज्यपाल की स्थिति मुख्यमंत्री से संभवत: ऊंची रहे। राज्यपाल वयस्क मताधिकार के आधार पर सभी नागरिकों द्वारा निर्वाचित रहेगा। अत: उसको प्रतिष्ठा प्राप्त रहेगी और सम्भव है आकस्मिक स्थिति उत्पन्न होने पर वह मुख्यमंत्री के अधिकारों को दबाने की कोशिश करे। इस सूरत में यह लाजिमी है कि दोनों में संघर्ष खड़ा हो जायेगा। इस सम्भावना को दूर करना ही होगा। वर्तमान व्यवस्था यह है कि बहुमत दल के नेता की हैसियत से मुख्यमंत्री ही प्रान्त की शासन-व्यवस्था का नियंत्रण करेगा जैसा कि इंग्लैंड में वहां का प्रधानमंत्री करता है। अगर प्रान्त में मुख्यमंत्री के दर्जे के दो व्यक्ति रहेंगे तो इससे प्रान्त में बड़ी दु:खद स्थिति पैदा हो सकती है। इसी बात को मद्देनजर रखते हुए संयुक्त बैठक में अन्ततोगत्वा यह तय रहा कि इस सम्बन्ध में सर्वोतम यह होगा कि राज्यपाल के निर्वाचन की बात खत्म कर दी जाये।

अगर आप पुरानी योजना को देखें, जिसका कुछ अंश यहां अनुच्छेद 144 (6) में दिया गया है, तो आपको यह संकट और स्पष्ट हो जायेगा। इस अनुच्छेद में कहा गया है कि—''इस अनुच्छेद के अधीन मंत्रियों की नियुक्ति और वियुक्ति से सम्बद्ध अपने प्रकार्यों का पालन राज्यपाल (Governor) स्वविवेक से करेगा''। इतना बड़ा अधिकार राज्यपाल को दिया गया था कि स्वविवेक से वह मंत्रियों को नियुक्त या बरखास्त कर सकता है। यह अधिकार तो इतना बड़ा है कि इसे प्रयोग में लाने की शक्ति प्रान्त के संवैधानिक प्रमुख को नहीं होनी चाहिये।। इसलिये इस व्यवस्था को अब हम हटा रहे हैं। इसके हटा देने पर प्रान्त की हुकूमत की स्थिति एक दायित्वपूर्ण सरकार की हो जायेगी जैसा कि ब्रिटेन में है।

[श्री के.एम. मुंशी]

हमें स्थिति पर विचार केवल इस रूप में करना होगा। हमें सोचना यह होगा कि प्रान्त का शासन अच्छा होगा निर्वाचित राज्यपाल रखने से या मनोनीत राज्यपाल रखने से? अगर मनोनीत राज्यपाल होगा तो स्वाभाविक है कि स्वविवेक से मंत्रियों को बरखास्त करने की उसे शक्ति न रह जायेगी। वह केवल एक संवैधानिक प्रमुख के रूप में रहेगा। जब तक कि मंत्रिमंडल को स्थिरता प्राप्त है, प्रान्त के शासन की बागडोर मुख्यमंत्री और उसके दल के हाथों में ही रहेगी।

माननीय मित्र श्री आलादी कृष्णस्वामी अय्यर ने इस सम्बन्ध में कैनाडा की मिसाल पेश की है। उनके गहन पाण्डित्य का मैं आदर करता हूं, पर यहां मैं उनसे सहमत नहीं हूं। अपने इस संशोधन में जिस तरह के गवर्नर की कल्पना है यानी मनोनीत गवर्नर रखने की जो व्यवस्था है, वह कैनाडा की व्यवस्था से भिन्न है। कैनाडा का गवर्नर तो कमोबेशी एक तरह से इंग्लैंड की हुकूमत के जरिये ही नियुक्त होता है जोकि वह वहां का वैधानिक प्रमुख रहता है। पर हमारे यहां का गवर्नर मनोनीत तो अवश्य रहेगा, पर अगर हुकूमत स्थिर है तो उसके अधिकार केवल अनुच्छेद 147 के प्रावधान तक ही सीमित रहेंगे, अर्थात् वह मंत्रिपरिषद् के विचारार्थ किसी विषय को, जिस पर मंत्री ने तो निर्णय कर लिया है पर मंत्रिपरिषद् ने नहीं किया है, उसके पास भेज सकता है। इसलिये सिवाय इसके कि वह कतिपय निर्णयों पर मंत्रिपरिषद् से पुनर्विचार करने के लिये कहे, उसे अन्य महत्त्व के काम नहीं सम्पादित करने होंगे। फिर इस बात पर भी विचार कर लीजिये। क्या यह अच्छा न होगा कि इस प्रकार्य को सम्पादित करने के लिये, बजाय मुख्यमंत्री के किसी अनुयायी व्यक्ति को रखने के हम एक स्वतंत्र व्यक्ति को रखें, जो इस प्रश्न पर सर्वथा तटस्थ होकर स्वतंत्र रूप से विचार कर सके? इसलिये इस दृष्टि से भी यही अच्छा होगा कि मंत्रिपरिषद् को सलाह देने के लिये हम एक स्वतंत्र व्यक्ति को ही रखें, जो उस अवधि में जब तक कि शासन को स्थैर्य प्राप्त रहे उसे सलाह दे।

मनोनीत गवर्नर रखने में एक दूसरा फायदा और भी है। उस जगह की बात लीजिये, जहां बहुमत प्राप्त कोई दल है नहीं या अगर है भी तो वह कई टुकड़ियों में बंटा हुआ है और मुख्यमंत्री का पद पाने के लिये उसमें बड़ी प्रतिद्वंदिता है। वैसी स्थिति में एक स्वतंत्र व्यक्ति, जो पार्टी की राजनीति से सर्वथा तटस्थ है, कहीं अच्छा होगा एक ऐसे व्यक्ति से, जो किसी पार्टी से सन्नद्ध है। उदाहरण के लिये यह कल्पना कर लीजिये कि वहां का कांग्रेस दल दो वर्गों में विभक्त हो जाता है, जैसा कि बदकिस्मती से कुछ प्रान्तों में हुआ है और हर दल मुख्यमंत्री के लिये अपना-अपना आदमी खड़ा करता है। ऐसी सूरत में निर्वाचित राज्यपाल की क्या स्थिति रहेगी, जो कमाबेशी मुख्यमंत्रित्व की आकांक्षा रखने वाले दो व्यक्तियों में से एक का अनुयायी होगा ही? इससे प्रान्त की शासन व्यवस्था में अनावश्यक जटिलता पैदा होगी। इससे कहीं अच्छा यह होगा कि हम एक मनोनीत राज्यपाल की व्यवस्था करें और इस तरह प्रान्त की राजनीति से उसे सर्वथा अलग रखें ताकि प्रतिद्वन्द्वी दलों में जो प्रतिद्वन्दिता हो उसका संचालन समुचित रूप से न्यायपूर्वक और वैधानिक ढंग से किया जा सके। सभी बातों पर विचार करते हुए अच्छा यही होगा कि केन्द्र द्वारा मनोनीत राज्यपाल रखा जाये तो प्रान्त की दलगत राजनीति से और तज्जन्य ईर्ष्या और आवेश से सर्वथा मुक्त हो।

फिर सद्यस्कृत्यता की दशा के सम्बन्ध में भी विचार किया जाये, जब अनुच्छेद 188 लागू किया जायेगा। सद्यस्कृस्यता की स्थिति उत्पन्न होने पर राज्यपाल स्वविवेक सम्बन्धी शक्ति का प्रयोग करेगा। उसे राष्ट्रपति को रिपोर्ट देनी होगी और उक्त अनुच्छेद के अधीन केवल दो सप्ताह तक उसकी कोई उद्घोषणा प्रवृत्त रहेगी। वैसी स्थिति के लिये भी, अगर कोई वास्तविक सद्यस्कृत्यता की दशा प्रान्त में पैदा हो गई हो, तो एक ऐसा ही व्यक्ति जिसका प्रान्त की राजनीति से कोई सम्बन्ध न हो, राज्यपाल के प्रकार्यों को अच्छी तरह पूरा करेगा न कि वह व्यक्ति जो वहां के एक या दूसरे दल से सम्बद्ध हो।

अनुच्छेद 188 में यह बात परोक्ष रूप से निहित है कि प्रान्त में ऐसी हालत होने पर, जबकि वहां कोई स्थायी हुकूमत न चलाई जा सके तभी, राज्यपाल सद्यस्कृत्यता सम्बन्धी अपनी शक्ति का प्रयोग करेगा। ऐसी हालत में उचित यही होगा कि ऐसा व्यक्ति जिसका वहां के किसी दल से सम्बन्ध हो, उस महत्त्वपूर्ण पद पर न आसीन किया जाये क्योंकि सद्यस्कृत्यता की दशा उत्पन्न होने पर प्रान्त में सार्वजनिक शान्ति बनाये रखने की जिम्मेदारी उसी पर रहेगी।

अनुच्छेद 188 में इससे आगे जिस स्थिति की कल्पना की गई है उसे भी सोचिये। प्रान्त में संविधान के निलम्बित हो जाने पर एक ऐसा ही व्यक्ति ज्यादा समुचित रहेगा जिस पर केन्द्र का विश्वास हो। प्रान्त के शासन में स्थिरता लाने में केन्द्र का एक विश्वस्त व्यक्ति ज्यादा उपयोगी होगा बनिस्बत ऐसे व्यक्ति के जिसका प्रान्त की राजनीति से गहरा सम्बन्ध हो।

गत अप्रैल महीने से इस उपरोक्त विचार ने जोर पकड़ा है। यह कहना सही नहीं है कि इस फैसले को पार्टी के सामने आखिरी समय रखा गया था या यह कि इस पर पूरी तरह से बहस नहीं हुई। संवैधानिक दृष्टिकोण से तथा समस्त देश की भलाई को देखते हुए—दोनों ही बातों का ख्याल करते हुए—बहुसंख्यक सदस्य इसी नतीजे पर पहुंचे हैं कि राज्यपाल को मनोनीत करना ही ज्यादा अच्छा होगा।

इन सभी बातों के ख्याल से मैं यही आशा करता हूं कि सभा सर्वसम्मति से यह संशोधन स्वीकार करेगी।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस प्रश्न पर इतने भाषण हो चुके हैं कि सभी तर्क जिसकी कि प्रस्ताव के पक्ष या विपक्ष में कल्पना की जा सकती है वह सब सभा के सामने—शायद रखे जा चुके हैं। मैं नहीं समझता कि मैं और क्या कह सकता हूं। किसी निर्णीत प्रश्न पर फिर विचार करने में सभा को जो थोड़ी हिचकिचाहट है उसे मैं अच्छी तरह समझ सकता हूं। ऐसी हिचकिचाहट का होना ठीक भी है। फिर भी हमने जब पहले इस पर विचार किया था तब क्या सूरत थी इसे भी हमें ध्यान में रखना चाहिये। हमने इससे पूर्व सन् 1947 में इस पर विचार किया था जब मेरे माननीय साथी उपप्रधानमंत्री ने उसे सभा के सामने रखा था और सभा ने उस समय इसे मंजूर कर लिया था। तब से आज करीब दो साल बीत चुके हैं और इन दो साल में यहां की स्थिति में एक बड़ा भारी परिवर्तन हो गया है और अगर हम किसी प्रश्न पर पुनर्विचार करना चाहते हैं, जिस पर हम दो वर्ष पूर्व, 15 अगस्त सन् 1947 के पहले, कोई निर्णय कर चुके हैं, तो 15 अगस्त सन् 1947 के बाद जो

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

कुछ हुआ है उसको ध्यान में रखते हुए हमारा ऐसा करना आश्चर्यप्रद न होना चाहिये, क्योंकि इस दो वर्ष की अवधि में हमें बहुत कुछ अनुभव—कड़वे अनुभव—प्राप्त हुए हैं। इसलिये मेरा मंतव्य तो यही है कि हम इस पर पुनर्विचार कर सकते हैं और कानूनन इसका अधिकार तो हमें है ही, औचित्य की दृष्टि से भी हमें इसका अधिकार है। वस्तुतः गत वर्ष के दौरान में कई मौकों पर इस सभा की समितियों ने इस प्रश्न पर तथा अन्य प्रश्नों पर विचार किया है, इसलिये नहीं कि इनमें कोई परिवर्तन ही किया जाये बल्कि इसलिये कि इनमें एक सामंजस्य स्थापित किया जाये। समितियां कई थीं जैसे कि संघ संविधान समिति, अनुकरणीय प्रान्तीय संविधान समिति। प्रान्तीय संविधान समिति के सभापति थे मेरे साथी खुद उप प्रधानमंत्री महोदय। इन सभी प्रश्नों पर विचार और विवाद हो जाने के बाद इन समितियों ने यह अनुभव किया कि फैसलों में कुछ परिवर्तन करना वांछनीय है। इस तरह सरदार पटेल ने तथा उन्हीं की तरह औरों ने भी, जिन्होंने निर्वाचित राज्यपाल रखने की व्यवस्था का प्रतिपादन किया था, यह अनुभव किया कि इसमें परिवर्तन करना वांछनीय है।

परिवर्तन करने के कारण क्या हैं यह सभा के सामने बताया जा चुका है और इस सम्बन्ध में कुछ कहना मेरे लिये जरूरी नहीं है। पर इतना मैं कहूंगा कि शुरू मैं भी यह नहीं कर पाया था कि इन दोनों में कौन सी व्यवस्था को अपनाना ज्यादा अच्छा होगा। अवश्य ही इस सम्बन्ध में एक व्यवस्था मैंने पसंद की थी पर वह ऐसी नहीं थी जिसे मैं खुद सर्वथा उत्तम ही कह सकूं। इस सम्बन्ध में मैंने जितना भी अधिकाधिक विचार किया और लोगों से परामर्श लिया, मैंने यह महसूस किया कि मनोनीत राज्यपाल रखने का जो यह प्रस्ताव है वह संविधान की वर्तमान स्थिति में सभी दृष्टियों से वांछनीय है। यह व्यवस्था व्यावहारिक दृष्टि से ही नहीं बल्कि लोकतंत्रीय दृष्टि से भी सर्वथा वांछनीय और ग्राह्य है।

जिन बातों को प्राप्त करने की हम जबरदस्त कोशिश करते आये हैं, उनमें एक यह है कि पार्थक्य-प्रवृत्ति को दूर किया जाये, दलों का निर्माण न हो। हमने यह फैसला कर लिया है कि साम्प्रदायिकता को कभी प्रश्रय न देंगे। पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था को और स्थानों को संरक्षित रखने की व्यवस्था को हमने उठा दिया है। किन्तु पार्थक्य पैदा करने वाली अन्य बहुत सी बातें हैं जिनके बारे में हमें अभी व्यवस्था करनी होगी। अवश्य ही कानून के जरिये हम इनकी बाबत कोई व्यवस्था नहीं कर सकते हैं। हमें दिल और दिमाग का सहारा लेकर इसकी व्यवस्था करनी होगी। फिर भी एक परम्परा या प्रणाली ऐसी होती है जो पार्थक्य भावनाओं को विकास देने में सहायक या अवरोधक होती है। मैं यह अनुभव करता हूं कि अगर हम निर्वाचित राज्यपाल की व्यवस्था रखते हैं तो उससे कुछ हद तक प्रान्तीयता सम्बन्धी पार्थक्य भावना को अधिक प्रश्रय मिलेगा बनिस्बत दूसरी व्यवस्था के। इस व्यवस्था के रहने से केन्द्र और प्रान्त में सम्पर्क कम हो जायेगा। आम तौर पर, बल्कि मैं तो समझता हूं कि हमेशा ही गवर्नर उसी प्रान्त का हुआ करेगा। जैसा कि यहां कहा गया है, हो सकता है कि वह उस बहुमत प्राप्त दल का, जिसके हाथ में उस समय प्रान्त की शासन व्यवस्था हो, वह एक प्रतिद्वंदी हो। और फिर उसके लिये वयस्क मताधिकार के आधार पर सर्वत्र चुनाव का जबरदस्त इन्तजाम करना होगा। प्रान्तीय और केन्द्रीय विधान

मंडलों के निर्वाचनों का जबरदस्त भार तो है ही और ऊपर से एक और जबरदस्त निर्वाचन की जिम्मेदारी अगर हम ले लेते हैं तो इसमें राष्ट्र के न केवल एक बड़े समय, एक बड़ी शक्ति ही का व्यय होगा, एक बड़ी रकम भी लगेगी जिसे अन्य जरूरी योजनाओं को उपेक्षा करके ही हम इसमें खर्च करेंगे। इसके अलावा इस व्यवस्था का लाजिमी नतीजा यह भी होगा कि प्रान्तीयता की संकुचित भावना को प्रश्रय मिलेगा और प्रान्तीय दृष्टिकोण से सोचने और करने की सर्वत्र प्रकृति पैदा होगी। यह जरूर है कि प्रान्तों को स्वशासन का अधिकार प्राप्त है इसलिये प्रान्तीय सरकारें जनता का प्रतिनिधित्व करती हुई प्रान्तीय ढंग पर लाभ करेंगी ही। पर प्रश्न यह है कि प्रान्त के राज्यपाल को आवश्यकता से अधिक प्रान्तीय स्वरूप देकर इस प्रान्तीय प्रकृति के दूषण को आप और भी बढ़ाना चाहते हैं क्या? मेरी समझ से तो अवश्य ही यह कहीं अच्छा होगा कि राज्यपाल का प्रान्त की राजनीति से, वहां के विभिन्न दलों से कोई विशेष सम्बन्ध न रहा हो। और जैसा कि श्री मुंशी ने कहा है, क्या यह अच्छा न होगा कि इस पद के लिये हम एक पूर्णत: तटस्थ व्यक्ति को रखें जो प्रान्त की सरकार को मान्य हो, क्योंकि अगर ऐसा व्यक्ति रखा जाता है जो उसे पसंद न हो, तो यह स्पष्ट है, वह अच्छी तरह अपने प्रकार्यों का सम्पादन नहीं कर पायेगा। राज्यपाल तो ऐसा ही व्यक्ति हो जो प्रान्त की जनता को मान्य हो, वहां की सरकार को मान्य हो और जो प्रान्त के अधिकारारूढ़ दल का अंग भी न समझा जाता हो। हो सकता है कि कभी-कभी प्रान्त का ही कोई व्यक्ति इस पद पर आसीन करा दिया जाये। हम यह नहीं कहते हैं कि प्रान्त का आदमी उस जगह इस पद पर रखा ही न जायेगा। पर सभी बातों का ख्याल करते हुए प्रान्त के बाहर के किसी व्यक्ति को—प्रख्यात व्यक्ति को—कभी-कभी ऐसे व्यक्तियों को जिन्होंने राजनीति में कोई जबरदस्त पार्ट न लिया हो, इस पद पर रखना वांछनीय होगा। राजनीतिक व्यक्ति सम्भवत: ऐसा कार्यक्षेत्र पसंद करेंगे जहां वह अधिक क्रियाशील रहें। पर ऐसे भी प्रख्यात व्यक्ति मिलेंगे जिनको शिक्षा सम्बन्धी कार्य में या जीवन के अन्य क्षेत्रों में बहुत बड़ी प्रतिष्ठा और महिमा प्राप्त होगी। स्वाभाविक है कि ऐसे व्यक्ति इस पद पर रहकर सरकार की नीति चलाने में उसको पूरा सहयोग देंगे और हर तरह उसकी नीति को पूरा करने में उसको मदद देंगे। और इन सब कार्यों को सम्पादित करते हुए जनता के सामने कुछ ऐसी ऊंची बात रखेंगे जो पार्टी से बहुत ऊपर की चीज होंगी। इस तरह ऐसे व्यक्ति वस्तुत: सरकार के लिये अधिक सहायक होंगे, बनिस्बत ऐसे व्यक्ति के जो अधिकारारूढ़ दल का अंग समझा जाता हो? मैं तो यही कहूंगा कि मनोनीत राज्यपाल को रखने की व्यवस्था दूसरी व्यवस्था से अधिक लोकतंत्रात्मक होगी, इन अर्थ में कि दूसरी व्यवस्था से लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था को सुचारू रूप से चलने में उतनी मदद न मिलेगी।

आखिर लोकतंत्र की कसौटी क्या है? इसकी आखिरी हद तक अगर आप आते हैं तो हो सकता है कि निर्वाचन के अर्थ में लोकतंत्रीय व्यवस्था आपको सर्वत्र उत्कृष्ट प्रतीत हो, पर इसमें संघर्ष पैदा होने की आशंका रहती है। और संघर्ष पैदा होने पर यह व्यवस्था टूटने लगती है। आज दुनिया में चारों ओर देखिए क्या हो रहा है? कितनी हुकूमतें ठीक से चल रही हैं? कितनी ही हुकूमतें आज जर्जर होती जा रही हैं। कितनी ही हुकूमतें ऐसी है जो राजनीतिक या आर्थिक कारणों से सदा ही जर्जरित बनी रहती हैं। बहुत ही

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

कम लोकतंत्रात्मक सरकारें आज आपको ऐसी मिलेंगी जो स्थायी हों। एक स्थायी लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था का प्रावधान करने में हमारे लिये बड़ा जरूरी यह है कि हम कोई ऐसी बात न करें जो भारत के ऐक्य को, उसकी एकरूपता को या उसकी शासन व्यवस्था को विच्छिन्न करे, जिससे कि संघर्ष पैदा हो। हम बड़े-बड़े गम्भीर संकट कालों से गुजरे हैं और एक हद तक उन पर विजय पाने में हम सफल रहे हैं। हमें अभी भी बड़े कठिन समय से होकर गुजरना है और मैं समझता हूं कि देश के ऐक्य को, इसकी शासन व्यवस्था के स्थैर्य को, उसकी सुरक्षा को सदा बनाये रखने का ध्यान रखते हुए ही हमें प्रत्येक बात पर विचार करना चाहिये और संविधान में ऐसी बहुत सी बातों का समावेश न करना चाहिये जिनके कारण बहुधा हमें बड़े-बड़े चुनाव करने पड़ें और हमारी इस एकता के भंग होने की आशंका हो। बड़े-बड़े चुनावों से जनता की मानसिक शांति भंग होती है और साथ ही राष्ट्र की बहुत बड़ी शक्ति निर्माणात्मक कार्यों से हटकर निर्वाचन व्यवस्था में व्यय होती है। इसमें शक नहीं कि हमारा लोकतंत्र निर्वाचन पर ही आधृत होना चाहिये। हमने विधान में इसकी व्यवस्था भी की है। पर सवाल तो यह है कि क्या हम सब बातों के लिये बार-बार चुनाव करने का प्रावधान करें? ऐसा करना बिल्कुल अनावश्यक है। ऐसा करने से संघर्ष पैदा होगा, शक्ति और धन का अपव्यय होगा। राज्यपाल और लोकतंत्रीय संसद के लिये जो बड़े चुनाव होंगे उनसे लोगों में एक विघटनात्मक प्रवृत्ति पैदा होगी। इसलिये मनोनीत राज्यपाल रखने का जो संशोधन है उसका मैं पूर्णतः समर्थन करता हूं।

बस एक ही बात और कहनी है, श्रीमान्। मैं समझता हूं कि निर्वाचित राज्यपाल की व्यवस्था में प्रायः अनिवार्य रूप से यही होगा कि राज्यपाल केवल उसी प्रान्त का व्यक्ति होगा और देश में वर्तमान विभिन्न अल्पसंख्यक वर्गों में से किसी का प्रतिनिधि शायद ही कभी मुश्किल से राज्यपाल बने। आमतौर पर यही होगा कि बहुमत प्राप्त दल अपने ही किसी सदस्य को उस पद पर आसीन करेगा। पर स्पष्ट है कि वांछनीय यह होगा कि अल्पसंख्यकों के प्रख्यात नेताओं को—सारल्य की दृष्टि से ही मैंने इस शब्द का यहां प्रयोग कर दिया है, पर भविष्य में आशा यही है कि हम बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक शब्दों का प्रयोग न करेंगे—विभिन्न दलों के नेताओं को इस पद के लिये अवसर दिया जाये। मेरा ख्याल है कि मनोनीत राज्यपाल की व्यवस्था रखने में अल्पसंख्यकों को इसका ज्यादा मौका मिल सकेगा।

***श्री सैयद मुहम्मद सादुल्ला** (आसाम : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, बहस में प्रधानमंत्री के दखल दे देने से पासा बिल्कुल पलट गया है और मेरा उनके खिलाफ बोलना बेकार है। फिर भी अपने सिद्धांत का पालन करने के लिये और सभा से देश की जो विशाल जनता है, उसके ख्याल से मैं यह जरूर कहूंगा कि इस मसले पर पूरी तरह से विचार होना चाहिये और बहस होनी चाहिये। यह संशोधन जिस पर कि अभी बहस हो रही है, एक ऐसा संशोधन है जो विधान के मसौदे की बुनियादी बातों को ही बदल देता है। संविधान-सभा के आदेशानुसार विधान निर्माताओं ने, प्रान्तीय राज्यपालों को चुनाव के आधार पर रखने का प्रावधान किया था। पर वर्तमान संशोधन चुनाव की बुनियादी बात को खत्म कर देता है और यह कहता है कि राज्यपालों की नियुक्ति राष्ट्रपति करे। यह संशोधन एक बुनियादी बात से ताल्लुक रखता है, इसलिये हमें इस पर खूब शांत होकर विचार

करना चाहिये, खास करके इसलिये कि इस संशोधन के जरिये संविधान सभा का पूर्व निर्णय रद्द हो जाता है। जहां तक कि प्रान्त के राज्यपालों का सम्बन्ध है, निर्वाचित व्यक्ति रखने में या मनोनीत व्यक्ति के रखने में क्या हानि-लाभ हैं, इसका हमें एक तलपट तैयार कर लेना चाहिये। संशोधन के समर्थक तीन बातों पर जोर देते हैं, जिनके कारण उसका विश्वास है कि नियुक्ति सम्बन्धी व्यवस्था ज्यादा अच्छी होगी। उनकी तीन बातों को एक-एक करके मैं बताये देता हूं। उनका पहला तर्क तो यह है, प्रान्त का मुख्यमंत्री एक निर्वाचित व्यक्ति रहेगा और अगर राज्यपाल भी निर्वाचित रहेगा तो इससे प्रान्तीय शासन व्यवस्था को सुचारू रूप से चलने में बाधा पहुंचेगी और ऐसी व्यवस्था लोकतंत्रीय सिद्धांतों के सर्वथा विपरीत होगी। इस तर्क के प्रत्येक शब्द का मैं विरोध करता हूं। आज देश में कई राजनैतिक दल हैं पर शासन चल रहा है एक दल का।

***श्री महावीर त्यागी:** हर मुल्क में एक ही दल शासन चलाता है।

***श्री सैयद मुहम्मद सादुल्ला:** श्री त्यागी के हस्तक्षेप से मैं विषयान्तर में नहीं पड़ूंगा। मैं इस तर्क के प्रत्येक शब्द के लिये चुनौती देता हूं। आज देश का शासन चला रही है यहां की एक ही प्रमुख राजनीतिक पार्टी। निर्वाचन को व्यवस्था रखने पर, अधिक सम्भव यही है कि प्रान्त का मुख्यमंत्री और राज्यपाल दोनों ही एक दल के व्यक्ति होंगे। इसका परिणाम यह होगा कि प्रान्त का शासन सुचारू रूप से चलेगा क्योंकि मुख्यमंत्री और राज्यपाल हमेशा मिलकर ही काम करेंगे। और फिर हम चाहते यह हैं कि हमारा लोकतंत्र पूर्णत: एक असाम्प्रदायिक लोकतंत्र हो, एक ऐसा गणराज्य हो जहां इस विचार को पोषण प्राप्त हो कि देश की शासन व्यवस्था में नागरिकों की आवाज रहनी चाहिये। अगर यहां आप निर्वाचन का सिद्धांत अपनाते हैं, तो इससे नागरिकों को प्रान्त के राज्यपाल की नियुक्ति के सम्बन्ध में अपनी बात कहने का अधिकार प्राप्त रहेगा। और फिर हमने जनता में यह विश्वास भर दिया है कि दो वर्ष पूर्व इस सम्बन्ध में हमने जो निर्वाचन का सिद्धांत अपनाया था, वह ज्यों का त्यों रहेगा; उसमें कोई परिवर्तन न किया जायेगा। और अब हमसे यह कहा जा रहा है कि मनोनीत राज्यपाल की व्यवस्था करने से प्रान्त का शासन ज्यादा अच्छी तरह चलेगा और शासन व्यवस्था लोकतंत्रीय रहेगी।

निर्वाचित राज्यपाल रखने के विरुद्ध यहां यह कहा जा रहा है श्रीमान्, कि प्रान्तों में दलबन्दी के झगड़े चल रहे हैं और इस व्यवस्था से संघर्ष भाव पैदा होगा एवं राज्यपाल और मुख्यमंत्री में सदा मतभेद ही चलता रहेगा। पर आप यह कैसे मान लेते हैं कि बाहर का कोई व्यक्ति अगर राज्यपाल नियुक्त किया जाता है तो उससे प्रान्त का शासन सुचारू रूप से चलाने में हमेशा मदद ही मिलेगी? कल यहां एक साहब ने कहा कि मनोनयन की व्यवस्था रखने पर राष्ट्रपति पश्चिमी भारत के किसी प्रख्यात राजनीतिज्ञ को राज्यपाल नियुक्त करके आसाम या उड़ीसा के सुदूरवर्ती प्रान्त को भेज सकेगा। यह कहा जाता है कि ऐसे प्रकाण्ड राजनीतिज्ञ महोदय का दिमाग सर्वथा तटस्थ और निष्पक्ष रहेगा। उनमें कोई पक्षपात भाव न रहेगा। वह प्रान्त की राजनीति में न फंसेगा। इसलिये प्रान्तीय कार्यों के सम्बन्ध में विचार करते समय वह तटस्थ एवं निष्पक्ष मस्तिष्क से काम ले सकेगा। इन सभी बातों को मैं माने लेता हूं। पर इस सम्बन्ध में इस अहम बात को भी ध्यान

[श्री सैयद मुहम्मद सादुल्ला]

में रखना चाहिये कि ऐसे राज्यपाल महोदय को प्रान्त की हालत की कोई जानकारी न रहेगी और इस सम्बन्ध में उनका विभाग बिल्कुल शून्य ही रहेगा। पश्चिमी प्रदेश से आये हुए राजनीतिज्ञों में बहुत ऐसे होंगे जिन्हें असम या उड़ीसा के सुदूरवर्ती प्रान्तों की हालत के सम्बन्ध में कतई कोई भी जानकारी न रहेगी। अपने जमाने में मैंने कई राजनीतिज्ञों से बातचीत की है और उनमें अच्छी से अच्छी जानकारी रखने वालों को भी, पूर्ववर्ती प्रदेशों की हालत के सम्बन्ध में मैंने दयनीय रूप से अनभिज्ञ पाया।

इसलिये श्रीमान्, यह नहीं कहा जा सकता है कि किसी पश्चिम भारतीय राजनीतिक की नियुक्ति मात्र से प्रान्त की हुकूमत अधिक सुचारू रूप से चलने लग जायेगी।

दूसरी बात जो इस सम्बन्ध में आपके सामने मैं रखना चाहता हूं वह यह है। यह हम कैसे मान लेते हैं कि प्रान्तीय मंत्रिमंडल उसी दल का होगा जिसका कि राज्यपाल नियुक्त किया जायेगा? अगर ऐसा न हुआ तो व्यवस्था और भी बदतर हो जायेगी। केन्द्र के आदेशानुसार राज्यपाल शासन को एक तरह से चलाने की कोशिश करेगा और प्रान्त का मंत्रिमंडल, जो दूसरे राजनीतिक दल का होगा, दूसरी ही तरह से उसे चलाने की कोशिश करेगा। इस खींचातानी में आखिर में होगा वही, जो मंत्रिमंडल चाहेगा और सुशासन के प्रयोजन के लिये राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किये गये राज्यपाल को वापस बुलाना होगा। मेरा ख्याल है कि यह एक ऐसी सम्भावना है जो बहुत दूर की बात नहीं है। मेरा मंतव्य तो यह है, श्रीमान्, कि सुशासन आदर्श शासन से कहीं अच्छा है। और सुशासन के साथ अगर स्वशासन भी हो तो वह सुशासन से भी अच्छा है। इसलिये, इस बात के ख्याल से प्रान्त का शासन एक सुशासन हो, दक्ष शासन हो और साथ ही स्वशासन हो, यहां निर्वाचन की व्यवस्था को रखना ही अधिक संगत है।

निर्वाचन व्यवस्था के विरुद्ध दूसरी आपत्ति यह की गई है, एक होआ यह खड़ा किया है कि उसमें खर्च बहुत बैठेगा। मैंने हौआ शब्द का प्रयोग इसलिये किया है कि प्रान्त के आम निर्वाचन में जो रकम खर्च की जायेगी उसी में राज्यपाल का भी निर्वाचन हो जायेगा। उसके निर्वाचन के लिये आपको ऊपर से एक पैसा भी न खर्च करना पड़ेगा। निर्वाचनों को मैं 1911 से ही, करीब चालीस वर्षों से देखता आ रहा हूं। मैंने यही देखा है कि जब आम चुनाव होता है, तो केन्द्रीय और प्रान्तीय विधान मंडलों का चुनाव साथ ही कर दिया जाता है। निर्वाचन केन्द्रों में जहां मतपत्रों की एक पेटी प्रान्तीय चुनाव के लिये रहती है वहीं एक और पेटी केन्द्रीय निर्वाचन के लिये भी रख दी जाती है। और कोई खर्च ऊपर से नहीं बैठता है। दोनों के लिये एक ही मतपत्र देने वाला अधिकारी रहता है। और एक ही नामजदगी का परचा लेने वाला अधिकारी रहता है और एक ही कर्मचारी वर्ग रहता है। मतदाता को सिर्फ इतना करना पड़ता है कि प्रान्तीय विधान मंडल सम्बन्धी मतपत्र को वह एक पेटी में डालता है, तो केन्द्रीय विधान मंडल सम्बन्धी मतपत्र को एक दूसरी पेटी में डालता है।

***माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार : जनरल): अगर कोई उपनिर्वाचन हुआ तो?

***श्री सैयद मुहम्मद सादुल्लाः** मैं आम चुनाव की बात कह रहा हूं जो नियमानुसार करना ही होगा। और आप कह रहे हैं उपनिर्वाचन की बात जो एक अपवाद की बात है। एक अपवाद के आधार पर आप किसी आम सिद्धांत को खराब नहीं बता सकते हैं। इसलिये मैं पूरे जोर के साथ कहूंगा कि ऐसी स्थिति में राज्यपाल के निर्वाचन में ऊपर से हमारा कोई खर्च न बैठेगा।

निर्वाचित राज्यपाल रखने के विरुद्ध तीसरी बात यह कही गई है और इसे कहने वाले हैं विद्वान विधिवेत्ता लोग, कि दुनिया में कहीं भी निर्वाचित गवर्नर रखने की व्यवस्था नहीं है। सिवाय एक अमेरिका के अन्य सभी देशों में गवर्नर की नियुक्ति ही की जाती है। हमें यह भी सुझाया गया है कि हमें अपने देश में इस सम्बन्ध में कैनाडियन पद्धति का अनुकरण करना चाहिये। कैनाडा की पद्धति वहां की हालत के मुताबिक वहां के लिये अच्छी हो सकती है। इस पद्धति के सम्बन्ध में भी यहां मसौदा समिति के दो प्रकाण्ड विधिवेताओं में मतभेद है। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी की एक राय है और श्री के.एम. मुंशी की दूसरी। श्री मुंशी का कहना है कि कैनाडियन पद्धति हमारे देश के लिये एक आदर्श पद्धति नहीं हो सकती है। और फिर हम अगर कैनाडियन पद्धति अपनाते भी हैं तो उसके लिये हमें एक और व्यवस्था यह करनी पड़ेगी कि विधान में एक बड़ी परन्तुका रखनी पड़ेगी। परन्तुका इस आशय की होगी कि एक ऐसी रूढ़ि को चालू करना होगा जिसके अनुसार राज्यपाल की नियुक्ति के सम्बन्ध में प्रान्तीय मंत्रिमंडल को राय देने का हक हो। यह सुझाव श्री अल्लादी ने दिया है। पर सारी बात तो यहीं आकर अटकती है। विधान के मसौदे के मुताबिक राज्यपाल की नियुक्ति पहले करनी होगी और फिर राज्यपाल वहां के वृहत्तम दल के नेता से कहेगा कि वह प्रान्तीय मंत्रिमंडल को बनाये। पर जब मंत्रिमंडल ही न रहेगा तो राज्यपाल की नियुक्ति के सम्बन्ध में राष्ट्रपति राय किससे लेगा? और फिर जैसा मैंने अभी कहा है, उस अवस्था का भी ख्याल कीजिये जबकि प्रान्तीय विधान मंडल के बहुसंख्यक सदस्य उस दल के न हों जो केन्द्र में अधिकारारूढ़ है। यह लाजिमी है कि राष्ट्रपति केन्द्र वाले दल का ही एक सदस्य होगा। राष्ट्रपति राज्यपाल पद के लिये जिस व्यक्ति को मनोनीत करेगा वह उसी के दल का ही एक व्यक्ति होगा। ऐसी सूरत में राष्ट्रपति में और उस दल में, जिसको कि प्रान्तीय विधान मंडल में बहुमत प्राप्त रहेगा, मतभेद का होना अवश्यम्भावी है।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारतीः** यह जरूरी नहीं है कि दोनों में मतभेद ही होगा।

***श्री सैयद मुहम्मद सादुल्लाः** इंडियन सिविल सर्विस वालों में से किसी एक को गवर्नर नियुक्त करने की जो प्रणाली यहां ब्रिटिश अमलदारी में थी, उसकी हम लोगों ने हमेशा निन्दा की है। बाहरी निकाय द्वारा गवर्नर नियुक्त या मनोनीत किये जाने की व्यवस्था को हटाने के लिये हमने तरह-तरह के नारे उठाये हैं। हमारा अमेरिका की लोकतंत्रीय व्यवस्था के प्रति सदा आकर्षण रहा है। हमारे लिये तो राज्यपाल के सम्बन्ध में निर्वाचन व्यवस्था अपनाने के सिवाय और कोई उत्तम मार्ग ही नहीं हो सकता है। मैं जानता हूं कि राज्यपाल को प्रतिष्ठा प्रदान के हेतु विधान में उसके निर्वाचन की व्यवस्था रखने की जो लोग वकालत कर रहे हैं। उनके सामने एक प्रबल विरोधी पक्ष है। मैं जानता हूं, विरोधियों की टक्कर में हम टिक न सकेंगे। यहां वक्ता पर वक्ता हमें यही बता रहे हैं कि शुरू

[श्री सैयद मुहम्मद सादुल्ला]

में निर्वाचन व्यवस्था के पक्ष में थे, पर गम्भीरतापूर्वक इस पर विचार करने के बाद अब उन्हें मनोनीतकरण सम्बन्धी व्यवस्था ही अधिक अच्छी दिखाई दे रही है। इन लोगों को अपने मत में परिवर्तन करने की पूरी आजादी विचार करके या देशभक्त होने का दावा करने का इनको कोइ एकाधिकार नहीं प्राप्त है, वह खुशी से ऐसा कर सकते हैं पर योग्यता का या किसी विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार करके या देशभक्त होने का दावा करने का इनको कोई एकाधिकार नहीं प्राप्त है। हम लोगों ने भी इस मसले पर उतना ही स्थिर चित्त होकर, देश के हित का उतना ही ख्याल रखते हुए विचार किया जितना कि हमारे इन बन्धुओं ने। और हमें इस बात का पक्का विश्वास हो गया है कि लोकतंत्र के बारे में हमारी जो कल्पना है, उसके अनुसार निर्वाचित राज्यपाल रखने को व्यवस्था मनोनीत राज्यपाल की व्यवस्था से अधिक उत्तम है। आज देश का शासन एक दल चला रहा है, श्रीमान्—मेरा मतलब कांग्रेस दल से है। इस महान् दल के सदस्यों की इस प्रश्न पर एक राय नहीं है और यह प्रश्न भी बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है, एक बुनियादी प्रश्न है जिसमें हर सदस्य को अपना व्यक्तिगत मत देने की आजादी रहनी चाहिये। पर हो क्या रहा है, श्रीमान्? एक आज्ञापत्र जारी किया गया है, पार्टी की तरफ से सभा के प्रत्येक सदस्य को, चाहे वह कांग्रेस दल का सदस्य हो या न हो, वह आदेशपत्र बांटा गया है कि हर कांग्रेस सदस्य...

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** एक औचित्य प्रश्न है, श्रीमान्। पार्टी के निर्णयादि की बातें यहां कहने में क्या माननीय सदस्य महोदय कायदे के अन्दर हैं।

***श्री सैयद मुहम्मद सादुल्ला:** आदेश पत्र तो यहां सभा भवन में ही बांटा गया था और दरअसल मुझे भी उसकी एक प्रति दी गई थी।

***अध्यक्ष:** शायद कुछ अन्य माननीय सदस्यों ने भी पार्टी का जिक्र यहां किया है। इस से तो यहां का वाद-विवाद बड़ा ही अवास्तविक बन जाता है। सदस्यों में जब कोई भाषण देने आता है तो यह कहता है कि वह संशोधन के विरुद्ध है, पर जब मत देने का समय आता है तो वह अपना मत देते हैं संशोधन के पक्ष में। मेरा ख्याल है कि बहस को यहां समाप्त कर देना चाहिये।

***श्री सैयद मुहम्मद सादुल्ला:** मैं जो कुछ भी कहने जा रहा था वह यह था कि संविधान सभा में किस दल की क्या सदस्य संख्या है। इस सभा की कुल सदस्य संख्या है इस समय 303। जहां तक मुझे ठीक-ठीक याद है इसमें कांग्रेस दल के सदस्यों की संख्या है 275। अब ऐसी सूरत में अगर कांग्रेस दल के सदस्यों को पार्टी द्वारा जारी किये गये आदेश पत्र के अनुसार ही मतदान करना पड़ेगा, तो दूसरे दल की राय तो कभी स्वीकृत ही न हो पायेगी। जैसा कि माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू के भाषण की समाप्ति पर उठते ही मैं नम्रतापूर्वक कह चुका हूं, मैं केवल इसी उद्देश्य से बोलने के लिये खड़ा हुआ हूं कि दूसरा पक्ष क्या है यह भी लिपिबद्ध हो जाये ताकि आने वाली सन्तानें उसे मान सकें।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, माननीय प्रधानमंत्री के स्पष्टवादिता पूर्ण भाषण के बाद किसी को भी यह समझाना मेरी समझ से जरूरी नहीं रह जाता है कि प्रान्त के राज्यपाल को रखने के सम्बन्ध में सभा के निर्णय में परिवर्तन करना या उसे

पलटना क्यों जरूरी है। पर इस मसले के सम्बन्ध में कई वक्ता बोले हैं जिनमें कई प्रकाण्ड विधिवेता एवं अनुभवी प्रशासक भी थे। ऐसे समय जबकि लोगों की भावनायें उत्तेजित रहती है, प्राय: यही होता है कि समर्थक एवं विरोधी, दोनों ही पक्ष, जो तर्क अपने-अपने पक्ष के प्रतिपादन में रखते हैं उन पर खूब बढ़ा चढ़ाकर जोर देते हैं। जिन लोगों ने यहां संशोधन का विरोध किया है उन्होंने सारा जोर इसी बात का भूत खड़ा करने में लगाया है कि संशोधन से केन्द्र को सीमातीत शक्ति मिल जायेगी, उससे प्रान्तीय सरकारें अपने अधिकारी से वंचित हो जायेंगी और लोकतंत्रीय भावना का गला घुट जायेगा, इत्यादि इत्यादि। दूसरी तरफ जिन्होंने संशोधन का समर्थन किया है उन्होंने अन्य देशों का उदाहरण रखते हुए अपने पक्ष का प्रतिपादन किया है। अवश्य ही यह मंजूर करना होगा कि संशोधन के समर्थकों ने जो उदाहरण पेश किये हैं वह इस सम्बन्ध में हमारे देश में जो स्थिति वर्तमान में है, उस पर सीमित रूप में ही लागू हो सकते हैं। कई पूर्व वक्ताओं ने संशोधन के विरुद्ध बोलते हुए उसके दोषों का चित्र चित्रण बड़ा-चढ़ाकर, अतिरंजित करके किया है। इससे एक दो गलत धारणायें पैदा हो गई हैं जिन्हें दूर कर देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं, श्रीमान्। इसी तरह आदरणीय मित्र श्री सैयद मुहम्मद सादुल्ला के दो-एक तर्कों का जवाब देना भी मैं जरूरी समझता हूं। मेरा ख्याल है कि उनके तर्कों का इसी समय खंडन कर देना ज्यादा अच्छा होगा क्योंकि उनके तर्क ऊपर से देखने में तो बहुत ही स्तुत्य और समुचित लगते हैं पर बारीकी से विचार करने पर यह जाहिर हो जाता है कि उनके तर्क न तो स्तुत्य है और न समुचित ही हैं। आदरणीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी ने कल अपने प्रवाहपूर्ण भाषण में जो तर्क उपस्थित किये थे उनका मैं यहां उल्लेख करूंगा। अपने भाषण में श्री अल्लादी कृष्णास्वामी ने कनाडा के गवर्नर जनरल द्वारा वहां के लेफ्टिनेंट गवर्नरों की नियुक्ति का उदाहरण पेश कर अपने पक्ष का प्रतिपादन किया था। मैं सभा से निवेदन करूंगा कि वह समूचे प्रश्न पर गौर करे। उसकी समझ में स्वत: यह बात आ जायेगी कि आदरणीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी ने कनाडा का उदाहरण, केवल उदाहरण वे नाते ही रखा था। उदाहरण रखने में उनका उद्देश्य यह कदापि न था कि गवर्नर की नियुक्ति के सम्बन्ध में सभा कनाडा में प्रचलित योजना को ही ज्यों का त्यों अपना ले।

मैं सभा को बताना चाहूंगा कि जब हम कनाडा या आस्ट्रेलिया की पद्धति को अपनाने की बात करते हैं तो इस बात को भुल जाते हैं कि इन देशों में आज जो अवस्था देखने में आ रही है वह उससे बिल्कुल भिन्न है जो कि वहां आरम्भिक दिनों में थी। उदाहरण के लिये मैं आपको बताऊं कि वेस्टमिनिस्टर स्टेट के पास होने के पहले आस्ट्रेलिया में गवर्नरों को नियुक्ति उसी तरह हुआ करती थी जैसे कि अन्य उपनिवेशों में हुआ करती है। आस्ट्रेलिया में प्रान्तीय गवर्नरों की स्थिति यह भी कि वह ब्रिटिश कैबिनेट के उस मंत्री के प्रति जिम्मेदार होते थे, जो राष्ट्रमंडलीय देशों के पारस्परिक सम्बन्धों की देख-भाल करता था। (Minister in charge of Commonwealth Relations) उसका सम्बन्ध सीधे ह्वाइटहाल से रहता था। वह सीधे पत्र व्यवहार कर सकता था और प्राय: सम्बन्धित ब्रिटिश सचिवालय से वह सीधे आदेश प्राप्त किया करता था, क्योंकि वेस्टमिनिस्टर के स्टेचूट के पास होने के बाद ही आस्ट्रेलिया को एक अविभक्त एकक (undivided unit) माना गया था और तभी से, यह जो पद्धति प्रचलित थी कि ब्रिटिश मंत्री सीधे आस्ट्रेलिया

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

के प्रान्तिक गवर्नरों से पत्र व्यवहार करते थे, वह खत्म की गई थी। कैनाडा की संवैधानिक स्थिति अभी कुछ दिनों पहले तक हमारी स्थिति में बहुत कुछ साम्य रखती थी, पर वहां एक प्रचलित विशेष व्यवस्था के सम्बन्ध में मैं यह जोर देकर कहूंगा कि वह इस देश के लिये कतई लागू नहीं हो सकती है। कैनाडा के विधान पर लिखने वाले हर लेखक यह मानते हैं कि लेफ्टिनेंट गवर्नरों की नियुक्ति सम्बन्धी जो समूची योजना है, और प्रान्तों पर केन्द्र का जो नियंत्रण है वह ऐसा है कि वास्तविक नियंत्रण वहां के केन्द्रीय शासन के ही हाथ में रहता है। कैनाडा के विधान के अधीन केन्द्रीय मंत्रिमंडल ही प्रान्तीय गवर्नरों को आदेश जारी किया करता है। वस्तुतः ऐसे मौके आये हैं जब कि उन्होंने गवर्नरों को हटाने में स्वविवेक का प्रयोग किया है। ऐसे दो मौकों की जानकारी प्रायः सबको है, जबकि वहां के केन्द्रीय मंत्रिमंडल ने गवर्नरों को हटाया है। कैनाडा के विधान के अनुसार, वहां प्रान्तीय गवर्नर वहां के केन्द्रीय शासन के एजेंट के रूप में काम करता है। जहां तक कि मेरा अपना सम्बन्ध है, मैं इस बात को नामंजूर करता हूं कि हम लोग यह चाहते हैं कि राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाने वाला हमारा भावी राज्यपाल किसी भी तरह से केन्द्रीय शासन के एजेंट के रूप में काम करे। मैं इस बात को बिल्कुल साफ कर देना चाहता हूं, क्योंकि भावी शासन के सम्बन्ध में जो योजना हमारे दिमाग में है, उसमें ऐसे विचार को कोई स्थान ही नहीं है। हां शक्ति वितरण सम्बन्धी योजना पर विचार करते समय अगर सभा यह आवश्यक समझे—क्योंकि सभा को ही इस पर आखिरी तौर पर विचार करना होगा—कि केन्द्र के पास कुछ शक्तियां रक्षित (reserved) रहनी चाहियें, ताकि प्रान्तों में एक सुशासन का चलना सुनिश्चित रहे और जरूरत पड़ने पर केन्द्र प्रान्तीय शासन में दखल दे सके, तो शक्ति वितरण सम्बन्धी व्यवस्था में हम इसके लिये पर्याप्त रूप से प्रावधान कर सकते हैं। हमारे लिये इस जीर्ण शीर्ण प्राचीन पद्धति को अपनाने की कोई जरूरत नहीं है। इस पद्धति का विकास तो ऐतिहासिक परम्पराओं के कारण हआ है। उपनिवेशों में सम्राट के विशेषाधिकार को बनाये रखने की जो कल्पना थी, उसे ब्रिटिश मिनिस्टरों ने क्रियात्मक रूप दिया जिससे इस पद्धति का विकास हुआ। हमें इस पद्धति विशेष को अपनाने की कोई जरूरत नहीं है। अगर परिस्थितिवश केन्द्र की मरजी के मुताबिक प्रान्तों को चलना हो भी, तो यह हमारे लिये उपयोगी न होगा कि इसके लिये प्रान्तीय राज्यपाल को हम केन्द्रीय शासन के एजेंट के रूप में रखकर उसके द्वारा केन्द्र की मरजी को प्रान्त पर लादें। मनोनीत राज्यपाल को रखने के विरुद्ध बहुत सी आपत्तियां जो यहां उठाई गई हैं, उनका स्वभावतः निराकरण हो जायेगा अगर हमारी उपरोक्त बात को ठीक-ठीक समझ लिया जाये। इस विशेष अनुच्छेद के द्वारा या यहां आगे पास होने वाले किसी अनुच्छेद के द्वारा हम यह प्रावधान ही नहीं करना चाहते हैं कि प्रान्त का राज्यपाल केन्द्र के एजेंट के रूप में रहे। मनोनीत राज्यपाल की उपयोगिता के सम्बन्ध में हमारे प्रधानमंत्री ने पर्याप्त प्रकाश डाल दिया है। इस सम्बन्ध में श्री सादुल्ला साहब से मैं इतना ही कहूंगा—बावजूद आपके यकीन के और बावजूद उस तजुर्बे के जो ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध अर्से तक जनता द्वारा तरह-तरह से चलाये गये संग्राम का हमें मिला है और जो तजुर्बा आपको ब्रिटिश गवर्नर के अधीन मंत्रिमंडल में रहकर प्रकार्य चलाने का मिला है, यह हम अच्छी तरह समझ गये हैं कि निर्वाचन व्यवस्था को, जहां वह जरूरी है वहां से हम हटाना नहीं चाहते हैं और न हम यही चाहते हैं कि कहीं व्यर्थ दोबारा चुनाव किया जाये।

श्री सादुल्ला साहब की एक बात से मैं अवश्य सहमत हूं। निर्वाचित राज्यपाल की व्यवस्था के विरुद्ध जो यह तर्क उपस्थित किया जा रहा है कि इसमें बड़ा खर्च बैठेगा, वह बिल्कुल बेमतलब है। लोकतंत्रीय प्रणाली तो एक खर्चीली प्रणाली है ही। अगर सभा को लोकतंत्रीय व्यवस्था रखनी है तो उसे निर्वाचन सम्बन्धी सारा खर्च उठाना ही पड़ेगा, चाहे फिर निर्वाचन एक बार करना हो या दो बार करना हो या जरूरत के मुताबिक जब भी करना हो। मैं श्री सादुल्ला की इस बात से पूर्णतः सहमत हूं कि खर्च और परेशानी वगैरह की बातें, जो यहां निर्वाचन व्यवस्था के विरुद्ध रखी जा रही हैं और उन्हें जो एक अजेय कठिनाई बताया जा रहा है, वह बेमतलब है।

वास्तविक महत्त्व की बात इस सम्बन्ध में यह है और मेरे ख्याल में शायद सभा भी इसी बात से प्रेरित होकर इस विचाराधीन प्रस्ताव का अन्ततोगत्वा समर्थन करेगी कि हम जो व्यवस्था रख रहे हैं, वह ऐसी हो कि उसमें संघर्ष की कोई आशंका न रह जाये। इस बात का खुलासा बहुत से वक्ताओं ने किया है और खासतौर पर हमारे प्रधानमंत्री ने। अगर समान शक्ति वाले दो अधिकारियों को आप रखते हैं जिनमें से एक का निर्वाचन तो अधिक प्रत्यक्ष रूप से होगा और जिसके कार्यकाल की अवधि अधिक सुनिश्चित रहेगी—यहां यह याद रहना चाहिये कि राज्यपाल की पदावधि पांच साल की होगी, अगर वह इससे पहले ही दोषारोप के कारण हटा न दिया गया और दूसरा ऐसा होगा कि जिसकी पदावधि आधे घंटे के लिए सुनिश्चित न रहेगी—तो यह निश्चय जानिये कि ये दोनों जब साथ काम करेंगे तो इनमें संघर्ष होगा ही। वयस्क मताधिकार के आधार पर राज्यपाल का निर्वाचन करने के पक्ष में एक यह बात तो कही ही जा सकती है कि इस व्यवस्था से यह होगा कि वह दल जिसका कि प्रान्त पर अधिकार रहेगा, लूट में पूरे तौर से हिस्सा न बंटा पायेगा क्योंकि राज्यपाल कौन चुना जायेगा यह अनिश्चित रहेगा और यह भी अनिश्चित रहेगा कि दल का नेता जो मुख्यमंत्री पद का अभिलाषी होगा वह निर्वाचित ही हो जायेगा। पर मसौदा समिति ने जिस दूसरी वैकल्पिक व्यवस्था की सिफारिश की है कि विधान मंडल चार सदस्यों की एक तालिका चुन दे जिसमें किसी एक को राष्ट्रपति राज्यपाल नियुक्त कर दे, अगर वह अपनाई जाती है तो फिर प्रान्त के बहुमत प्रान्त दल के दो शक्तिशाली व्यक्तियों के बीच लाभ के सम्बन्ध में समझौता हो जायेगा। एक व्यक्ति दूसरे से यों कहेगा:—''आप तो राज्यपाल बन जाइये और मैं बनूं मुख्यमंत्री''। मैं तो यही अनुभव करता हूं श्रीमान्, कि अगर इन दोनों ही व्यवस्थाओं में से ही मुझे एक को चुनने को कहा जाये तो अवश्य ही तालिका व्यवस्था को न पसंद कर मैं वयस्क मताधिकार के आधार पर राज्यपाल के चुनाव को ही पसंद करूंगा। इसका यह मतलब नहीं है कि मैं इस व्यवस्था को पसंद करता हूं क्योंकि प्रान्तीय प्रशासन के दो महत्त्वपूर्ण पदों के लिये दो चुनावों का प्रावधान करके विधान में संघर्ष का बीज वपन करना हम नहीं चाहते हैं।

माननीय मित्र श्री सादुल्ला ने यह कहा है कि सदस्यों ने अपने दो वर्ष पूर्व के विचारों को बदलने का जो कारण बताया है कि उसे वह नहीं समझ सके हैं। (*बाधा*) माननीय मित्र श्री बी. दास क्या कह रहे हैं इसे मैं नहीं सुन पा रहा हूं। जवाब में इतना ही कहूंगा कि मेरे ख्याल में उन्हीं बातों की वजह से इन लोगों ने अपनी राय बदली है, जो श्री सादुल्ला को अब भी परेशान कर रही है। आपने अभी-अभी फरमाया है कि हम

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

लोग अमेरिकन विधान के कैसे प्रशंसक हैं। नि:संदेह हम अमेरिकन विधान के प्रशंसक जरूर हैं पर हमने उसे अपनाया नहीं है। अमेरिकन विधान को न अपनाने का कारण यह है कि हम लोगों का यह विश्वास है और मेरा तो पक्का विश्वास है कि भारतीय जनता की प्रवृत्ति या मनोदशा के लिये संसद मूलक लोकतंत्र ही अधिक अनुकूल होगा। अगर दो वर्ष पहले हमने राज्यपाल के निर्वाचन की व्यवस्था को अपनाया था तो वह केवल उसी दोष के कारण जिसका शिकार होकर सादुल्ला साहब इतनी वकालत कर रहे है। अवश्य ही राय बदलने वालों में मैं नहीं हूं। हम लोग एक विधान तैयार करने की कोशिश कर रहे थे और ऐसा करने में हमने यह कोशिश की कि विभिन्न विधानों से भिन्न-भिन्न तरह के संरक्षणों को हम अपनायें। हमारे दिमाग में यह बात तय नहीं हो पाई थी कि हमारा भावी विधान पूर्णत: संसदात्मक रहेगा या कुछ अंशों में संसदात्मक और कुछ अंशों में राष्ट्रपति प्रधान रहेगा। वस्तुत: हमारे नेताओं के लिये यह एक प्रशंसा की बात है कि उन्होंने अन्त तक इस सम्बन्ध में अपना दिमाग खुला रखा। विभिन्न स्थितियों में इस प्रश्न पर विवेचन करना उन्होंने जारी रखा और अन्ततोगत्वा इस निर्णय पर पहुंचे कि हम शुद्धत: संसदात्मक शासन व्यवस्था ही अपनायेंगे, जिसमें राष्ट्रपति-प्रधान शासन व्यवस्था का रंचमात्र भी अंश न रहेगा। माननीय मित्र श्री सादुल्ला को मैं बताऊंगा कि अमेरिका में विधान मंडल और गवर्नर की परस्पर तुलनात्मक स्थिति में क्या है। कुछ रियासतों में विधान मंडल एक साल तक आहूत ही नहीं किया जाता और कई रियासतों में तो, मेरा ख्याल है, बजट पास करने के लिये विधान मंडल का आह्वान किया जाये, इसकी कोई पाबन्दी ही नहीं है। अमेरिकन विधान के अधीन वहां की रियासतों का कार्य संचालन कैसे होता है, इसकी जो थोड़ी बहुत जानकारी हम लोगों को है, उसी के आधार पर हम यहां इस सम्बन्ध में यत्र तत्र कुछ बातें कहते हैं। अमेरिका में न्यायपालिका का कितना प्राधान्य है, इस पर जस्टिस राय जैक्सन की लिखी हुई एक पुस्तक जो किसी पाठ्यक्रम में है, मैं अभी हाल में पढ़ रहा था। पुस्तक में मैंने एक स्थल पर यह स्पष्टोल्लेख पाया कि वहां की कई रियासतों में विधान मंडल को दो-दो वर्षों तक नहीं आहूत किया जाता है। स्थिति यह है कि या तो गवर्नर को आप प्रधानता दें या विधान मंडल को। अगर आप राष्ट्रपति मूलक प्रणाली अपनाते हैं तो गवर्नर को प्राधान्य प्राप्त रहेगा। संसदात्मक प्रणाली में प्रधानता प्राप्त रहेगी विधान मंडल को और बहुमत प्राप्त दल के नेता को। प्राधान्य किसे दिया जाये यह पसंद कर लेना बिल्कुल आसान है। किसे प्राधान्य देना तर्कसंगत होगा यह साफ समझ में आ जाने वाली बात है। यही कारण है कि हमने मनोनीत राज्यपाल को रखना पसंद किया है। कैनाडा की नजीर का जो यहां हवाला दिया गया है, अब मैं उसकी ओर आता हूं सभा के सदस्यों का बाहर वालों के मन में यह ख्याल न पैदा होने दीजिये कि कैनाडा के उदाहरण के आधार पर हमने वहां की कोई व्यवस्था अपनाई है। हमारा विचार यह है कि गवर्नर की नियुक्ति प्रधानमंत्री की सलाह से की जायेगी, पर प्रधानमंत्री सम्बन्धित मुख्यमंत्री से परामर्श करके ही अपनी सलाह देगा और इस मामले के मुख्यमंत्री की मंजूरी लाजिमी होगी। मेरा ख्याल है कि इस सम्बन्ध में यह रूढ़ि (मुख्यमंत्री की मंजूरी) चालू भी हो चुकी है। इस तरह राज्यपाल के रूप में जो व्यक्ति निर्वाचित होगा, वह प्रान्तीय राजनीति को निष्पक्ष रूप से संतुलित रख सकेगा। एक ऐसे व्यक्ति को

रखने में क्या लाभ है जिसका किसी दल से सम्बन्ध न हो, जो प्रान्तीय भावना से परे हो, इस पर प्रधानमंत्री ने पर्याप्त रूप से प्रकाश डाल दिया है। इस सम्बन्ध में मैं इतना ही कहूंगा। माननीय मित्र श्री सादुल्ला, जिस स्थिति की कल्पना कर रहे हैं उसका अस्तित्व सम्भवत: आरम्भिक काल में रहे पर वह स्थिति सदा नहीं बनी रहेगी। मुख्यमंत्री से आखिर कैसे परामर्श किया जा सकता है? हम सर्वत्र नया निर्वाचन करने जा रहे हैं। राज्यपाल तो आपके पास पहले ही से मौजूद है जिन्हें राष्ट्रपति या केन्द्रस्थ प्रधानमंत्री ने नियुक्त कर रखा है। राज्यपाल अपने पद पर बना रहे या नहीं इस सम्बन्ध में मुख्यमंत्री से कैसे परामर्श लिया जा सकता है? नये मुख्यमंत्री के कार्यभार संभालने पर क्या राज्यपाल की फिर से नियुक्ति हो जायेगी?

मध्यवर्ती काल में इस तरह की असंगत बातों का होना स्वाभाविक है। सादुल्ला साहब ने खुद यह कहा हैं कि किसी एक खराबी की वजह से आप समूची योजना को खराब नहीं बना सकते हैं। यह बिल्कुल सम्भव है कि प्रान्त में राज्यपाल का प्रकार्य करने वाला व्यक्ति इस बात पर बिल्कुल राजी हो कि जरूरत हो तो राज्यपाल को फिर से मनोनीत किया जाये या अगर मुख्यमंत्री उसे नहीं पसंद करता है तो वह अपने पद से हट जायेगा। अगर प्रान्त का नया मंत्रिमंडल राज्यपाल पद पर अपनी पसंद का कोई दूसरा व्यक्ति रखना चाहता है, तो मुझे इसमें रंचमात्र संदेह नहीं है कि प्रधानमंत्री, अगर वह अपने वर्तमान प्रधानमंत्री के समान ही व्यापक दृष्टिकोण रखने वाला उसी के दर्जे का व्यक्ति है, प्रान्त के मुख्यमंत्रियों पर खुशी से यह छोड़ देगा कि वह अपनी पसंद के आदमियों को राज्यपाल पद पर आसीन कर लें। मेरा ख्याल है कि जिस भयानक स्थिति की कल्पना से श्री सादुल्ला साहब परेशान हो रहे हैं उसका समुचित रूप से निराकरण हो जायेगा, अगर भारत का प्रधानमंत्री ऐसा व्यक्ति हुआ जो लोकतंत्रीय सिद्धांतों को समझता हो और उन पर चलता हो।

एक ही बात मुझे और कहनी है श्रीमान्, और वह है पं. हृदयनाथ कुंजरू द्वारा कही चन्द बातों के सम्बन्ध में। मैं इससे सर्वथा सहमत हूं कि उन्होंने जो बातें कही हैं वह इसी कारण से कही हैं कि उनके मन में वास्तविक सन्देह है। इस सम्बन्ध में मैं इतना कहूंगा कि विधान के मसौदे के आगे आने वाले अनुच्छेदों के सम्बन्ध में नि:संदेह सभा का यही इरादा है कि उनमें ऐसा परिवर्तन कर दिया जाये कि पहले किये गये परिवर्तनों से उनका मेल बैठ सके। अगर कुंजरू साहब यह चाहते हैं कि आरक्षित विधेयकों के सम्बन्ध में अनुच्छेद 175 में जो प्रावधान है, उनका वहां खुलासा कर दिया जाये तो हमें ऐसा कर देना चाहिये। माननीय मित्र अगर यह चाहते हैं कि उन विषयों के बारे में जिनमें केन्द्रीय सरकार का अपना स्वार्थ है, केन्द्रीय सरकार के विचार क्या हैं, इसका स्पष्ट उल्लेख हो जाना चाहिये और विधेयकों को आरक्षित रखने की जिम्मेदारी राज्यपाल पर न रहनी चाहिये, क्योंकि उससे उस पर दोषारोप य लांछन का एक वातावरण पैदा होगा तथा उसके और मुख्यमंत्री के बीच दुर्भाव उत्पन्न होगा, तो उचित स्थल पर हमें इसका खुलासा कर देना चाहिये। हम यह लिपिबद्ध कर दें कि अमुक स्थितियों में सहगामी विषयों के सम्बन्ध में राज्यपाल राष्ट्रपति से आदेश मांग सकता है। इस बात का तो हम साफ-साफ उल्लेख विधान में कर सकते है, जिससे कोई शक न रह जाये।

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

अनुच्छेद 188 के सम्बन्ध में मुझे सिर्फ एक ही बात कहनी है। इस अनुच्छेद को सर्वथा एक स्वतंत्र अनुच्छेद समझ लिया गया है और यह नहीं ख्याल किया गया है कि अनुच्छेद 278 का इससे सम्बन्ध है और इसी 278 अनुच्छेद पर ही यह सर्वथा आधृत है। इसीलिये इसके बारे में यह कहा गया है कि इससे राज्यपाल को खास अधिकार मिल जाते हैं और मुख्यमंत्री महज कठपुतली के रूप में रह जाता है। यह अनुच्छेद केवल इसी उद्देश्य से रखा गया है कि मौके पर जो अधिकारी हों, उसे 14 दिन की संक्षिप्त अवधि के लिये यथोचित कार्यवाही करने का अधिकार रहे। हो सकता है कि अक्सर यह अवधि सात या पांच दिन की रहेगी। सभा के माननीय सदस्यों से मैं कहूंगा कि वह अनुच्छेद 278 को पढ़ लें और अगर जरूरत हो तो उसमें संशोधन कर लें। अनुच्छेद 278 में यह साफ-साफ कहा गया है कि राष्ट्रपति, जो एक पखवारे के बाद प्रान्त की सारी व्यवस्था को अपने हाथ में लेगा, उसे संसद का समर्थन प्राप्त रहेगा। इस अनुच्छेद का मूल प्रयोजन यही है कि उस सूरत में जबकि प्रान्त का शासन बिल्कुल खराब हो गया हो या ऐसी हालत वहां पैदा हो गई हो कि सख्त कार्यवाही करना जरूरी हो तो शासन की जिम्मेदारी प्रान्त से हटा कर केन्द्र को हस्तान्तरित कर दी जाये। केन्द्र के सम्बन्ध में तो हम यह कल्पना ही नहीं करते हैं कि वहां गैर जिम्मेदार हुकूमत रहेंगी। वहां एक ऐसा राष्ट्रपति होगा जिस पर प्रधानमंत्री का नियंत्रण रहेगा और प्रधानमंत्री पर नियंत्रण रहेगा संसद का। अनुच्छेद 278 में साफ-साफ कहा गया है कि राष्ट्रपति सर्वथा अपनी मर्जी के मुताबिक नहीं काम करेगा। संसद की अनुमति लेकर ही वह काम करेगा। अगर प्रान्तों में एक व्यक्ति का शासन जारी रहने दिया जाता है या यह कहिये कि केन्द्रीय सरकार राज्यपाल को आदेश देकर अपना शासन वहां जारी रखती है, तो ऐसा तभी होगा जबकि इसके लिये संसद की अनुमति मिल गई हो। जहां प्रान्तीय प्रतिनिधि एक बड़ी संख्या में रहें और प्रान्त के दृष्टिकोण को सभा के समक्ष रखने का उन्हें मौका रहेगा। मुझे इसमें रंचमात्र भी शक नहीं है कि भावी भारत का कोई प्रधानमंत्री ऐसा न होगा जो ऐसी सख्त कार्यवाही करने में, जिनका कि अनुच्छेद 188 में उल्लेख है, प्रान्त विशेष के प्रतिनिधियों के मत की उपेक्षा करेगा।

मैं सभा का और समय नहीं लेना चाहता हूं क्योंकि इस पहलू पर यहां बहुत कुछ कहा जा चुका है। पर मैं अपने कर्त्तव्य से च्युत होऊंगा अगर विचाराधीन प्रस्ताव पर मतदान की जो कल्पना माननीय मित्र श्री सादुल्ला ने यहां व्यक्त की है, उसके सम्बन्ध में एक बात न कह दूं। शायद यह दुर्भाग्य की बात है कि देश में हालत ऐसी रही है कि यहां केवल एक ही दल ने देश की आजादी के काम में प्रमुख भाग लिया और दूसरा दल जो प्रभावी रूप से हमें सहयोग दे सकता था, वह मुल्क छोड़कर सारे सामान के अन्यत्र चल गया। इसमें कांग्रेस दल का क्या दोष है? इस दल ने अकेले देश की स्वतंत्रता के लिये जंग किया, सुतरां इसी के बहुसंख्यक सदस्य निर्वाचित होकर यहां आये। पर मैं अपने माननीय मित्र को इतना जरूर बताऊंगा कि कांग्रेस पार्टी ऐसी पार्टी नहीं है जिस पर डिक्टेटरों का शासन चल रहा हो। बहुमत का इस पार्टी में अवश्य ही आदर किया जाता है और ऐसी कोई बात नहीं की जाती है कि जनता की राय को तोड़-मोड़कर उसे एक खास राय के हक में लाया जाये और दुनिया को यह दिखाया जाये कि यह राय सभा के बहुमत की राय है। अगर मेरे माननीय मित्र आज अल्पमत में है, तो इसके लिये क्या

मैं दोषी हूं या प्रधानमंत्री दोषी या कांग्रेस पार्टी दोषी है? मैं अपने मित्र को यह विश्वास दिलाता हूं कि हम लोगों में ऐसे लोग, जो कांग्रेस पार्टी के सदस्य हैं, हमेशा यही भावना रखते हैं कि बहुमत प्राप्त दल होने के नाते, जो महत्त्वपूर्ण दायित्व उन पर आयत है, उसका वह निष्ठापूर्वक निर्वाह करें। उन्हें मैं यह भी विश्वास दिलाऊंगा कि कांग्रेस पार्टी कभी कोई ऐसा काम नहीं करती है जिसके विरुद्ध पार्टी के बहुत से लोग हों, भले ही, उन सदस्यों को किसी प्रश्न विशेष पर बहुमत प्राप्त न हो। इस तरह के मसले में इन सब बातों के लाने की कोई जरूरत नहीं है क्योंकि इसके पीछे ऐसी कोई बात नहीं जो बहुत ही महत्त्व की हो। माननीय मित्र श्री सादुल्ला को मैं यह बताना चाहता हूं कि निर्वाचित राज्यपाल, मुख्यमंत्री के मुकाबले में प्रान्तीय आजादी का न तो अधिक हिमायती होगा और न अल्पसंख्यकों के हितों का ही वह उतनी हिमायत करेगा। अगर हम निर्वाचित राज्यपाल रखने का निर्णय करते हैं तो इसका मतलब यही होगा कि हम दुहरे निर्वाचन की व्यवस्था कर रहे हैं और संघर्ष की गुंजायश पैदा कर रहे हैं। सम्भावना यही है कि हमें ऐसे आदमी ही न मिल सकेंगे जो उन प्रकार्यों को पूरा कर सकें, जिन्हें कि हम निर्वाचित राज्यपाल के द्वारा या तालिका व्यवस्था से लिये गये राज्यपाल के द्वारा सुचारू रूप से पूरा कराना चाहते हैं। पर साथ ही मैं जानता हूं, जैसा कि बहुधा कहा जाता है प्रतिभा सम्पन्न योग्य सम्राट को भी अक्सर फांसी के तख्ते पर लटकना पड़ता है। यह भी हो सकता है कि ऐसा राज्यपाल, जो बौद्धिक एवं अन्य दृष्टि से प्रचुर योग्यता रखने वाला व्यक्ति है, वह भी शायद बड़ा अप्रिय बन जाये और श्री सादुल्ला जैसा स्थिर एवं अनुभवी व्यक्ति ही खूब चुनकर रखे गये प्रतिभा सम्पन्न राज्यपाल से अच्छा सिद्ध हो जाये। इसके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि भविष्य हमारे हाथ की बात नहीं है। हमारा बस तो इतना ही है कि जो भी सीमित योग्यता परमात्मा ने हमें दी है, उससे भविष्य के बारे में ठीक-ठीक कल्पना करके एक व्यवस्था कर दें। मेरा विश्वास है कि संशोधन में जो सुझाव रखा गया है उसी पर चलने में बुद्धिमानी है और मैं आशा करता हूं कि सभा उसे स्वीकार करेगी।

***श्री बी.एस. सर्वटे** (मध्य भारत): अध्यक्ष महोदय, मैं एक भारतीय रियासत से आया हूं। राज्यपाल को राष्ट्रपति मनोनीत करे या जनता उसका निर्वाचन करे, इस प्रश्न पर जो वाद-विवाद यहां दो दिनों से चल रहा है उसे मैंने बड़े ध्यान से सुना है। इस समूची बहस के दौरान में मैं यही आश्चर्य कर रही था कि सभा ने आया यह भी सोचा है या नहीं या इस पर भी पर्याप्त ध्यान दिया है या नहीं कि जो विधान बन रहा है वह भारत के केवल गैर रियासती इलाकों के लिये नहीं होगा बल्कि वह समूचे देश के लिये लागू होगा जिसमें रियासतें भी शामिल हैं। मैं यह बता दूं कि जो विधान हम बना रहे हैं वह भारतीय रियासतों के लिये भी लागू होगा, क्योंकि ये रियासतें भी हमारे भावी भारतीय संघ के अंग के रूप में ही रहेंगी।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** अनुच्छेद 128 में यह साफ-साफ कह दिया गया है कि यह केवल उन्हीं क्षेत्रों के लिये लागू होगा जो प्रान्तों के नाम से पुकारे जाते हैं न कि रियासतों के लिये।

***श्री बी.एस. सर्वटे:** मैं यह बता दूं कि जब हम लोगों को यहां सदस्य रूप में उपस्थित होने की अनुमति दी गई है, तो यह स्वाभाविक है कि...

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** मैंने यह नहीं कहा है कि माननीय सदस्य को बोलने का अधिकार नहीं है। मैं तो केवल उनकी एक भूल को ठीक कर रहा था।

***श्री बी.एस. सर्वटे:** उस सूरत में माननीय मित्र को थोड़ा इंतजार करना था और यह देखना चाहिये था कि मैं कहने क्या जा रहा हूं। अस्तु, जो विधान हम बना रहे हैं वह अब भारतीय रियासतों के लिये भी लागू होगा। पहले यह बात रियासतों की मरजी पर छोड़ी गई थी कि वह चाहें तो विधान को स्वीकार करें या न करें। पर अभी हाल में जो प्रतिज्ञा-पत्र (Covenants) जारी किया गया है, उसके अनुसार यह अब रियासतों की इच्छा की बात नहीं रह गई है। पर अगर हम यह मान भी लें कि रियासतों को यह स्वेच्छा प्राप्त है कि वह विधान को अपने लिये मंजूर करें, या न करें, तो उस हालत में भी इसमें शक नहीं है कि रियासतें विधान को स्वीकार ही करेंगी। इसलिये स्थिति यह है कि भावी भारतीय संघ के लिये जो विधान हम बना रहे हैं, वह उन क्षेत्रों के लिये भी लागू होगा जो रियासतों में शामिल है। अत: सभा को उस व्यक्ति की स्थिति के सम्बन्ध में भी विचार करना चाहिये, जो रियासतों में प्रान्तीय राज्यपाल का स्थानीय रहेगा। सभा को यह मालूम होगा कि जो रियासतें भारतीय संघ में प्रविष्ट हो चुकी हैं और जिन पर कि यह विधान लागू रहेगा, वहां उन रियासतों में या जहां कई रियासतों को मिलाकर एक संघ बनाया है वहां उन संघों में प्रधान के रूप में राजप्रमुख हैं और राजप्रमुख का पद वंश परम्परा के हिसाब से नहीं दिया जायेगा, पर जो अभी राजप्रमुख होंगे, वह अपने शेष जीवन भर तो इस पद पर बने ही रहेंगे। भारत सरकार ने यह मंजूर कर लिया है कि राजप्रमुखों की वर्तमान स्थिति कम से कम उनके जीवन काल तक तो बनी ही रहेगी। अगर स्थिति यही है, तो गवर्नर का निर्वाचन किया जाये या राष्ट्रपति उसे नियुक्त करे इस पर जो यहां वाद-विवाद चल रहा है वह क्या आश्चर्यप्रद नहीं है? राष्ट्रपति द्वारा राज्यपाल के नियुक्त किये जाने के पक्ष में जो तर्क दिया जा रहा है वह यह है कि अगर राज्यपाल नहीं नियुक्त किया जाता है तो प्रधानमंत्री शान्ति बनाये रखने की अपनी जिम्मेदारी का निर्वाह अच्छी तरह न कर पायेगा। समूचे भारत का एक तृतीयांश तो इन रियासतों को मिल कर बना है और इस एक तृतीयांश का शासन राजप्रमुख करते हैं जो राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत न रहेंगे। अगर प्रधानमंत्री शान्ति बनाये रखने की अपनी जिम्मेदारी का पालन इन राजप्रमुखों को लेकर कर सकता है तो यह समझने की बात है कि अमनोनीत राज्यपालों को लेकर भी वह शेष भारत के सम्बन्ध में अपनी जिम्मेदारी का पालन खूब मजे में कर सकता है। वस्तुत: यह एक बहुत बड़ी असंगति की बात है। सभा को कुछ न कुछ ऐसा प्रावधान ढूंढना ही होगा, जिसके द्वारा राजप्रमुखों की स्थिति और उनके अधिकार राज्यपाल की स्थिति और अधिकार के स्तर पर ला दिये जायें या फिर हमें एक दूसरा विकल्प अपनाना होगा। दूसरा विकल्प यह है दो वर्ष पूर्व इस सभा ने एक प्रस्ताव पास किया था जो यह था कि राज्यपाल निर्वाचन द्वारा ही रखा जाये। उस समय यह दलील दी गई थी कि अगर निर्वाचित राज्यपाल की व्यवस्था नहीं की जाती है, तो लोकतंत्रीय सिद्धांत का हनन होगा और प्रान्त को जो स्वशासन का अधिकार है वह खत्म हो जायेगा। पर अब सभा इस मत पर आ गई है कि देश के हित में मनोनीत राज्यपाल को रखना ही अधिक श्रेयस्कर है। अगर आप विधान में कोई ऐसा प्रावधान नहीं करते हैं, जिससे

अधिकार के सम्बन्ध में राज्यप्रमुख राज्यपाल के स्तर पर आ जायें तो फिर कुछ और आगे बढ़कर आपको दूसरा विकल्प यह अपनाना होगा कि जब विधान को पास करने का समय आये तो उस समय जो भी राज्यपाल पद पर आसीन हो उनके ही वंशजों को यह पद देने का या कम से कम उनके जीवनकाल तक तो उनको ही इस पद पर आसीन रहने देने का प्रावधान कर दिया जाये। यही दो रास्ते सभा के सामने हैं। मैं आग्रह करूंगा कि राजप्रमुखों को राज्यपालों के स्तर पर लाने के हेतु आवश्यक प्रावधान रखने पर सभा अवश्य विचार करे। मैं बतौर चेतावनी के यह कह रहा हूं और इसलिये कह रहा हूं कि सभा ऐसे प्रावधान की उपयोगिता की कहीं उपेक्षा न कर बैठे। मैं देखता हूं कि विधान में कहीं भी रियासतों या उनको मिलाकर बनाये संघों के सम्बन्ध में कोई प्रावधान नहीं रखा गया है। हम ऐसा मानते हैं और जो स्थिति है उसमें यह मानना होगा कि रियासतें भारतीय संघ के अंग के रूप में ही रहेंगी। फिर भी राज्यों या राज्यसंघों को प्रान्तों के स्तर पर लाने के लिये हम कोई प्रावधान नहीं कर रहे हैं, यह आश्चर्य की ही बात है।

इस चेतावनी के साथ मैं विचाराधीन प्रस्ताव का यानी राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत राज्यपालों को रखने के प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्षः** श्री सिधवा।

आशा है, उनका यह भाषण आखिरी भाषण होगा और उनके बाद कोई और सदस्य न बोलेगा। इस मसले पर यहां काफी बहस हो चुकी है।

***श्री महावीर त्यागीः** क्या अपने निर्णय के रूप में आप यह बात कह रहे हैं, श्रीमान्?

***अध्यक्षः** अगर आप को अप्रिय न मालूम हो तो मैं यही कहूंगा कि आगे और किसी वक्ता को बोलने देने का मेरा अभिप्राय नहीं है।

***श्री आर.के. सिधवाः** अध्यक्ष महोदय, मैं उन लोगों में नहीं हूं, जिन्हें उन मित्रों के रुख पर आश्चर्य हो रहा है जिन्होंने पहले निर्वाचित राज्यपाल रखने के प्रस्ताव का समर्थन किया था और अब मनोनीत राज्यपाल रखने के प्रस्ताव का समर्थन कर रहे हैं। करीब दो वर्ष पहले जब इस प्रश्न पर विचार किया गया था तो उस समय भी मेरा मत यही था कि राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत व्यक्ति ही राज्यपाल पद पर आसीन होना चाहिये। संशोधन संबंधी पुस्तक के 204 पृष्ठ पर आप मेरा एक संशोधन देखेंगे जिसकी सूचना गत अप्रैल में मैंने भेजी थी संशोधन का रूप यों है–

''राज्य का शासक प्रधान द्वारा नियुक्त किया जायेगा।'' (The Governor of a State shall be appointed by the President)

उस समय कुछ लोग भी थे जो मेरे इस मत से सहमत थे कि राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत व्यक्ति ही राज्यपाल बनाया जाना चाहिये। पर उस समय मेरी और मुझसे सहमत मित्रों की आवाज केवल अरण्य रुदन ही रही। पर आज स्थिति बदल गई है। माननीय मित्र

[श्री आर.के. सिधवा]

रोहिणी कुमार चौधरी ने कल यहां यह पूछा था: ''इस बीच में आखिर कौन सी ऐसी बात हो गई जिसके कारण लोगों ने अपनी राय बदल दी है?'' मैं यह पूछता हूं कि देशहित के ख्याल से लोगों ने अगर अपनी राय बदल दी है तो क्या गुनाह किया है? जो लोग इस व्यवस्था का विरोध करते थे, उन्होंने अगर यह समझ लिया है कि अल्पमत वालों की ही राय ठीक थी, अगर अब वे लोग यह महसूस करते हैं कि अल्पमत वालों का कहना ही सही था, तो उनके लिये क्या यह उचित नहीं है कि वह अपनी राय को बदल दें? क्या ऐसा करना गलत है? मैं तो इनका कृतज्ञ हूं। इस मत को रखा था चन्द लघु व्यक्तियों ने पर अब हमारे इन बड़े व्यक्तियों ने, यह महसूस करके कि उनकी राय गलत थी अपनी राय बदल दी और हम लोगों का मत मान लिया। इसके लिये वस्तुत: हमें उनकी प्रशंसा करनी चाहिये। गत वर्ष भी बहुतों ने यही महसूस किया था कि राज्यपाल की नियुक्ति मनोनयन द्वारा होनी चाहिये। पर यह केवल संयोग की बात थी कि लोग निर्वाचन व्यवस्था के पक्ष में बह गये और उसी व्यवस्था की जीत रही। श्री दास ने यह फरमाया है कि मनोनीत राज्यपाल रखने का परिणाम यह होगा कि केन्द्र में तो लोकतंत्रीय व्यवस्था रहेगी और प्रान्तों में रहेगी एक स्वेच्छातंत्रीय व्यवस्था। मैं नहीं समझ पाता हूं कि प्रान्तों में स्वेच्छातंत्रीय व्यवस्था कैसे रहेगी। आखिर प्रान्तों के विधान मंडलों में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा निर्वाचित सदस्य आयेंगे ही। फिर वहां स्वेच्छातंत्रीय व्यवस्था कैसे रहेगी?

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसाम : जनरल): एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान्। माननीय सदस्य का यह कहना कि गत अवसर पर केवल संयोगवश ही निर्वाचन व्यवस्था मंजूर कर ली गई थी, सभा पर यह एक गंभीर आक्षेप है।

***अध्यक्ष:** मैं नहीं समझता कि आक्षेप के उद्देश्य से यह कहा गया है। यह तो भाषा की बात है। उन्होंने अपने ढंग से यह बात कही है।

***श्री आर.के. सिधवा:** राज्यपाल को मनोनीत करेगा राष्ट्रपति जो जनता द्वारा निर्वाचित रहेगा। इसे आप स्वेच्छातंत्र कहेंगे? ब्रिटिश अमलदारी में जिस तरह लोगों को मनोनीत किया जाता था और अब जिस तरह किया जायेगा उसमें अन्तर है। इस अन्तर को शायद माननीय मित्र नहीं समझ रहे हैं। अतीत में वायसराय केन्द्रीय विधान मंडल के लिये सदस्य मनोनीत करता था और प्रान्तीय विधान मंडलों के लिये गवर्नर और म्युनिसिपैलिटी या जिला बोर्डों के लिये कमिश्नर और कलेक्टर मनोनीत करता था। माननीय मित्र श्री बी. दास क्या यह समझते हैं कि अब जो मनोनयन होगा वह उसी तरह का होगा जैसा कि वायसराय वगैरह करते थे? आप अगर ऐसा समझते हैं तो आपकी समझदारी पर अफसोस है। हमारा राष्ट्रपति जनता द्वारा निर्वाचित रहेगा। हम यह नहीं चाहते हैं कि सभी पदों के लिये निर्वाचन ही किया जाये। मूलभूत बात यह है कि विधान मंडलों में निर्वाचित व्यक्ति ही आयेंगे। और फिर आप भी यह नहीं चाहेंगे कि सभी पदों के निर्वाचन ही किया जाये और इस तरह देश में अव्यवस्था पैदा की जाये। यह एक बुनियाादी बात है जो हमारे ध्यान में रहनी चाहिये।

साथ ही मैं यह भी महसूस करता हूं कि राज्यपाल की स्थिति सर्वथा नगण्य रहेगी। उसे शक्तियां प्राप्त हैं; ऊंचा दर्जा प्राप्त है, वह प्रान्त का सर्वश्रेष्ठ नागरिक माना जायेगा, यह सब मैं मंजूर करता हूं, पर कार्यपालन के सम्बन्ध में वह सर्वथा नगण्य रहेगा और इस दृष्टिकोण से मनोनीतकरण की व्यवस्था और वह भी किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा नहीं जिसे जनता का विश्वास नहीं प्राप्त है बल्कि...

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): अगर हम अमेरिका से कुछ ऐसे यंत्र मंगा लें जो मनुष्य का कार्य सम्पादित कर देते हों तो क्या हमारा प्रयोजन सिद्ध हो जायेगा?

***श्री आर.के. सिधवा:** अगर आपका यही तर्क है तो फिर इसका उत्तर देने में मैं असमर्थ हूं।

दूसरी बात यह है श्रीमान्, कि इस सम्बन्ध में हम जो नीति अपनाने जा रहे हैं, वह एक बड़ी ही अभिनन्दनीय नीति है और वह यह है कि किसी प्रान्त में वहां का कोई व्यक्ति राज्यपाल पद के लिये मनोनीत न किया जायेगा। यह एक बड़ी उपयोगी नीति है और मैं इसका समर्थन करता हूं। हो सकता है कि इस व्यवस्था में भी आप कभी-कभी गलत मनोनयन कर बैठें पर आमतौर पर यह गलती न होगी। अगर प्रान्त से ही किसी व्यक्ति को मनोनीत करने की नीति आप अपना लेते हैं तो इससे इतना कलह पैदा होगा कि राज्यपाल की प्रतिष्ठा जाती रहेगी और वह बदनाम हो जायेगा। मैं इस प्रसंग में किसी नाम का उल्लेख करना नहीं चाहता हूं पर मैं अपने कर्त्तव्य से च्युत होऊंगा अगर एक विशेष घटना का उल्लेख यहां न कर दूं।

***अध्यक्ष:** कृपा कर किसी नाम का उल्लेख न कीजिये और न किसी घटना का ही उल्लेख कीजिये जिसे लोग आसानी से समझ जायें।

***श्री आर.के. सिधवा:** एक ऐसे व्यक्ति का जिक्र कर रहा हूं जिसका चरित्र सन्देह से परे है जिसके विचार स्वातंत्र्य पर आज कोई प्रश्न नहीं किया जा सकता है और...

***श्री बी. दास:** मैं इस कथन का सख्त विरोध करता हूं कि छोटे प्रान्तों में ऐसे चरित्रवान और योग्य व्यक्ति नहीं हैं जो दूसरे प्रान्तों के राज्यपाल होने लायक हों। मैं कहूंगा कि छोटे प्रान्तों में, बम्बई और अन्य बड़े प्रान्तों से भी योग्य और चरित्रवान् व्यक्ति आपको इस पद के लिये मिलेंगे।

***अध्यक्ष:** श्री सिधवा को आखिर अपनी राय रखने का अधिकार तो है ही।

***श्री आर.के. सिधवा:** एक ऐसा व्यक्ति जिसका चरित्र प्रश्न से परे हो, जिसकी योग्यता और सच्चाई के बारे में कोई सन्देह न हो, अगर उसे भी आप उसके ही प्रान्त में राज्यपाल पद पर आसीन कर देते हैं तो उसकी सर्वप्रियता जाती रहेगी और वह बदनाम हो जायेगा। मैं किसी के नाम का उल्लेख यहां नहीं करना चाहता। इतने से ही अगर कुछ लोग मेरे इशारे को समझ गये हों अच्छा ही है।

[श्री आर.के. सिधवा]

श्री दास का कहना है कि उनके प्रान्त में ऐसे योग्य और सक्षम व्यक्ति हैं जो दूसरे प्रान्तों में राज्यपाल हो सकें। कल मैंने ही यहां कहा था कि सभी प्रान्तों में योग्य व्यक्ति हैं और राज्यपाल की नियुक्ति में किसी प्रान्त विशेष की उपेक्षा की जाती है तो इसके लिये बुरा न मानना चाहिये। मेरी इस बात पर कल श्री बी. दास ने हर्ष प्रकट किया था। पर आज ऐसा मालूम पड़ता है कि आप कुछ दूसरा ही समझ रहे हैं और रह-रह कर आपत्ति कर रहे हैं। मैं यह जरूर महसूस करता हूं कि भविष्य में चाहे जो भी कोई प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति हो, राज्यपाल की नियुक्ति में उसे सभी प्रान्तों का ध्यान रखना चाहिये। यह बात नहीं है कि योग्य व्यक्ति केवल चन्द प्रान्तों में ही पाये जाते हों, योग्य व्यक्ति सभी प्रान्तों में पाये जाते हैं और राज्यपाल का चुनाव करने में राष्ट्रपति को, यह बात ध्यान में रखनी चाहिये। इस सम्बन्ध में उसको संकुचित दृष्टिकोण न रखना चाहिये। उसकी यह कोशिश होनी चाहिये कि सभी प्रान्तों के योग्य व्यक्तियों को मौका मिले। मैं इस मत का प्रबल समर्थक हूं कि प्रान्त के किसी व्यक्ति को राज्यपाल पद पर वहां न रखना चाहिये और मैं आपको बता दूं कि अगर आप ऐसा करते हैं तो राज्यपाल अप्रिय हो जायेगा। इन शब्दों के साथ मैं हृदय से इस संशोधन का समर्थन करता हूं, श्रीमान्।

***माननीय श्री सत्यानारायण सिंहः** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं श्रीमान् किः

''अब इस प्रश्न पर राय ली जाये।''

***श्री बी. दासः** पहले इसके कि वाद-विवाद समाप्त करने का प्रस्ताव पेश हो, मैं आपसे यह अनुरोध करूंगा कि श्रीमान्, कि चन्द बातों के स्पष्टीकरण का मुझे मौका दिया जाये, यद्यपि यह लाजमी है कि इस संशोधन के पक्ष में ही मैं राय दूंगा।

***अध्यक्षः** जब आप संशोधन के पक्ष में ही राय देंगे तो फिर संशोधन के विरुद्ध बोलने में क्या लाभ है? मैं ऐसी बात की अनुमति नहीं दे सकता।

***श्री बी. दासः** हम पर यह बन्दिश लगा दी गई है श्रीमान्, कि...

***अध्यक्षः** अगर आप पर कोई बन्दिश है तो वह बन्दिश खुद आपने लगाई है। इस सभा में हर सदस्य को अपनी इच्छानुसार राय जाहिर करने का हक है।

प्रस्ताव यह है किः

''इस प्रस्ताव पर अब राय ली जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस संशोधन पर एक लम्बी बहस हुई है और मैं नहीं समझता कि अब कोई लम्बी वक्तृता देकर सभा का समय लेना मेरे लिये जरूरी है। मैं दो बातों को स्पष्ट करने के लिये ही खड़ा हो रहा हूं। एक तो सभा को मैं यह बता देना चाहता हूं कि इन दो विकल्पों में, जो

मसौदा-समिति ने सभा के सामने रखा है और इस संशोधन नं. 2015 में जिस पर यहां कल से बहस चल रही थी, क्या परस्पर सम्बन्ध है। दूसरी बात मैं यह बता देना चाहता हूं कि सभा के सामने ठीक-ठीक प्रश्न क्या है ताकि सभा को मालूम हो सके कि मसौदा समिति द्वारा दिये गये दोनों विकल्पों और इस संशोधन के सम्बन्ध में निर्णय करते समय क्या बात ध्यान में रखने की है।

पहला विकल्प जो मसौदा समिति ने रखा है श्रीमान्, वह तो ठीक-ठीक उसी निर्णय के अनुसार रखा गया है जो कि कुछ दिन पहले सभा ने उस समिति की सिफारिशों के आधार पर किया था, जो प्रान्तीय संविधान के बारे में आधारभूत सिद्धांतों को निर्धारित करने के लिये नियुक्त की गई थी। मसौदा-समिति को इस मामले में स्वेच्छा से कोई बात रखने का अधिकार नहीं था क्योंकि उसे जो आदेश दिये गये थे उनके अनुसार मसौदा समिति इस सभा द्वारा स्वीकृत सिद्धांतों को मानने के लिये बाध्य थी। इसलिये प्रश्न यह उठता है कि फिर मसौदा समिति ने इस विकल्प को उपस्थित करना क्यों आवश्यक समझा। इसका कारण यह है। मसौदा समिति ने यह महसूस किया, जैसा कि सभा में सभी जानते हैं, कि राज्यपाल के कोई प्रकार्य न होंगे। उसे ऐसा कोई प्रकार्य न रहेगा जिसको कि वह स्वविवेक या व्यक्तिगत निश्चय के आधार पर सम्पादित करे। इस नये विधान के सिद्धांतों के अनुसार उसे सभी मामलों में अपनी मंत्रिपरिषद् की राय पर ही चलना होगा। इस वस्तुस्थिति का ख्याल रखते हुए यह सोचा गया कि क्या यह वांछनीय होगा कि निर्वाचकों पर एक और ऐसे निर्वाचन में भाग लेने की जिम्मेदारी लादी जाये जिसमें समय बहुत लगेगा, दिक्कत बहुत उठानी पड़ेगी और मैं तो कहूंगा कि जिसमें खर्च भी बहुत बैठेगा। यह भी महसूस किया गया कि यह बखूबी जानते हुए कि विधान के अधीन राज्यपाल को क्या शक्ति प्राप्त रहेगी, कोई भी व्यक्ति इस पद के लिये चुनाव लड़ने को तैयार न होगा। हम लोगों ने यह महसूस किया कि राज्यपाल की शक्तियां बड़ी ही सीमित हैं, नाम मात्र की हैं और उसका पद केवल एक शोभा बढ़ाने के लिये है, ऐसी सूरत में बहुत ही कम लोग ऐसे मिलेंगे जो इस पद के लिये चुनाव लड़ने को तैयार हों। यही कारण था कि मसौदा समिति ने एक विकल्प का सुझाव देना आवश्यक समझा।

वाद-विवाद के सिलसिले में यहां निर्वाचन के विरुद्ध यह तर्क रखा गया है कि इससे राज्यपाल और मुख्यमंत्री में प्रतिद्वंदिता पैदा होगी क्योंकि दोनों जनता द्वारा निर्वाचित रहेंगे। जहां तक कि मेरा संबंध है मैं इस तर्क से प्रभावित नहीं था क्योंकि मैं यह नहीं मानता कि चुनाव द्वारा लिये जाने पर भी राज्यपाल और मुख्यमंत्री में प्रतिद्वंदिता पैदा हो सकती है। इसका सीधा-सा कारण यह है कि मुख्यमंत्री चुना जायेगा नीति के आधार पर राज्यपाल तो किसी नीति के आधार पर चुना न जायेगा क्योंकि अधिकार न होने से उसकी अपनी कोई नीति होगी नहीं। जहां तक मैं समझता हूं, राज्यपाल का निर्वाचन होगा उसके व्यक्तित्व के आधार पर। उसके चुनाव में यह बात ख्याल में रखी जायेगी कि हैसियत के ख्याल से, चरित्र की दृष्टि से, शिक्षा की दृष्टि से, सार्वजनिक जीवन में उसका स्थान देखते हुए, राज्यपाल पद के लिये वह ठीक होगा या नहीं। पर मुख्यमंत्री के चुनाव में यह देखा जायेगा कि उसका प्रोग्राम सही और उपयोगी है या नहीं। इसलिये अगर हम यहां चुनाव का सिद्धांत अपना भी लेते हैं तो संघर्ष की कोई गुंजाइश नहीं है।

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

दूसरा तर्क यह दिया गया है कि अगर हम राज्यपाल को केवल प्रतीक के रूप में ही रख रहे हैं तो क्या ऐसे पदाधिकारी को चुनाव के जरिये रखना जरूरी है जिसमें बड़ा खर्च बैठेगा और बड़ी परेशानी भी उठानी पड़ेगी? इसी बात को देखते हुए मसौदा समिति ने यह महसूस किया कि उसे एक दूसरा विकल्प सुझा देना चाहिये। सभा में जो बहस हुई है उससे मुझे यही धारणा हुई है कि अधिकतर वक्ता यह अनुभव करते हैं कि मसौदा समिति द्वारा सुझाये गये दोनों विकल्पों में और इस संशोधन में एक जबरदस्त और बुनियादी फर्क है। मेरी समझ से, मसौदा समिति के दूसरे विकल्प में और इस संशोधन में कोई बुनियादी फर्क नहीं है। मसौदा समिति का जो दूसरा विकल्प है उसमें भी मनोनीतकरण की बात है। फर्क इतना ही है कि उसमें यह शर्त रख दी गई है कि राष्ट्रपति, प्रांतीय विधान मंडल द्वारा चुनी एक तालिका में से ही एक व्यक्ति को इस पद के लिये मनोनीत करेगा। पर बुनियादी बात यह है कि मनोनीतकरण का सिद्धांत वहां भी रखा गया है। इस दृष्टि से मसौदा समिति के दूसरे विकल्प में और श्री ब्रजेश्वर प्रसाद द्वारा उपस्थित किये गये इस संशोधन में कोई बुनियादी फर्क नहीं है। दूसरे शब्दों में मैं यह कहूंगा कि सभा के सामने दो ही रास्ते हैं। या तो मसौदा समिति के दूसरे विकल्प को वह पसंद कर ले या इस संशोधन को। संशोधन में यह कहा गया है कि मनोनीत करने में कोई कैद न रहेगी, राष्ट्रपति जिसे पसंद करेगा मनोनीत कर लेगा। पर दूसरे विकल्प में यह कैद रखी गई है कि प्रांतीय विधान द्वारा चुनी एक तालिका से ही किसी एक को राष्ट्रपति मनोनीत करेगा। एक दृष्टिकोण से, मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि, मसौदा समिति का जो सुझाव है यानी तालिका में से किसी एक को मनोनीत करने का जो प्रस्ताव है वह संशोधन वाले प्रस्ताव से कहीं अच्छा है। पर साथ ही सभा को मैं यह भी आगाह कर देना चाहता हूं कि सभा के समक्ष मूल प्रश्न यह नहीं है कि मनोनीत राज्यपाल को रखा जाये या निर्वाचित राज्यपाल को, क्योंकि जैसा कि मैं कह चुका हूं, यह पदाधिकारी केवल प्रतीक के रूप में ही रहेगा। मनोनीतकरण द्वारा उसे नियुक्त किया जाये या किसी अन्य व्यवस्था द्वारा, यह तो केवल एक मनोविज्ञान का प्रश्न है। इससे जनता के मन में यही सवाल रहेगा कि राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किसी व्यक्ति को रखना ठीक होगा या किसी ऐसे व्यक्ति को रखना ठीक होगा जिसको मनोनीत करने में विधान मंडल के सदस्यों ने हाथ बटाया हो। इसके अतिरिक्त इसमें मुझे तो और कोई खास बात नजर नहीं आती है। अत: जो बात मैं सभा को बताना चाहता हूं वह यह है कि उसके सामने मूल प्रश्न यह नहीं है कि राज्यपाल को मनोनीत किया जाये या उसको निर्वाचित किया जाये। पर मूल प्रश्न यह है कि उसे क्या-क्या शक्ति हम देना चाहते हैं। अगर हमारा राज्यपाल केवल संवैधानिक प्रतीक के रूप में ही रहेगा और विधान में जो अधिकार उसे देने की हम सोच रहे हैं उससे अधिक शक्तियां उसे न रहेंगी, तथा प्रांतीय मिनिस्ट्री के अन्दरूनी शासन व्यवस्था में उसे हस्तक्षेप का कोई अधिकार न रहेगा तो फिर मनोनीतकरण संबंधी सिद्धांत को मानने में व्यक्तिगत रूप से मुझे तो कोई खास आपत्ति नहीं मालूम पड़ती है। इसलिये मेरा निवेदन यह है कि...

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** क्या आप ऐसी भी किसी स्थिति की कल्पना करते हैं जबकि राज्यपाल को चाहे वह प्रतीक मात्र हो या अन्यथा, मंत्रिमंडल बनाने की शक्ति

न रहेगी? क्या उसे यह क्षमता प्राप्त न रहेगी कि मंत्रिमंडल बनाने के लिये वह एक व्यक्ति को बुलावे, चाहे उस व्यक्ति को एक प्रबल बहुमत प्राप्त हो या एक महत्त्वपूर्ण अल्पमत ही उसके साथ हो? अवश्य ही यह एक बहुत बड़ा अधिकार है जिससे उसे किसी भी हालत में वंचित नहीं किया जा सकता है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** वह अधिकार तो राज्यपाल को रहेगा ही चाहे वह मनोनीत किया गया हो या निर्वाचित हो। मंत्रिमंडल बनाने के लिये अगर वह गलत आदमी को बुलाता है तो उसे शीघ्र ही अपनी उस गलती के लिये पछताना होगा। निर्वाचित राज्यपाल की व्यवस्था करने पर भी आखिर इस गलती की संभावना तो बनी ही रहती है। ऐसे राज्यपाल का, हो सकता है कि कोई मित्र हो जिसे ही वह मंत्रिमंडल बनाने के लिये बुलाये पर सभा शीघ्र ही विश्वास या अविश्वास के प्रस्ताव द्वारा इसका फैसला कर देगी। पर प्रश्न का यह पहलू ऐसा नहीं है जो महत्त्वपूर्ण हो। इसका महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि स्थानीय विधान मंडल में बहुमत प्राप्त दल द्वारा बनाये मंत्रिमंडल के काम में हस्तक्षेप करने का क्या उसे अधिकार रहेगा? अगर बहुमत प्राप्त मंत्रिमंडल के आन्तरिक प्रशासन में हस्तक्षेप का उसे अधिकार प्राप्त नहीं है तो फिर यह प्रश्न कि उसे मनोनीत किया जाये या निर्वाचित किया जाये सर्वथा एक गौण प्रश्न है। इस प्रश्न के संबंध में मेरा तो यही मत है, और यही कारण है कि सभा से मैं यह कह रहा हूं, कि इस मसले पर फैसला करने में उसे कमोवेशी इस सैद्धांतिक प्रश्न के पचड़े में न पड़ना चाहिये कि राज्यपाल को निर्वाचित किया जाये या मनोनीत किया जाये बल्कि सभा को यह मुख्य बात ध्यान में रखनी चाहिये कि उसे अधिकार क्या दिये जा रहे हैं? यह मैं मानता हूं कि यह प्रश्न हमारे सामने आज नहीं पेश है, इस पर तो हम आगे चलकर विचार करेंगे, जब अनुच्छेद 175 और 188 के निहित प्रश्नों पर पहुंचेंगे और किसी संशोधन के जरिये या और अतिरिक्त खंड रखकर उसे अधिकार देने की बात करेंगे। राज्यपाल को अधिकार प्रदान करने वाले जो खंड या संशोधन आगे चलकर सभा के सामने पेश हों, उनके संबंध में उसे सतर्क और सावधान होकर विचार करना चाहिये। पर अगर इस संबंध में विधान में मूलभूत सिद्धांत यही रखा जाता है जैसा कि हमारा इरादा है, कि राज्यपाल केवल संवैधानिक प्रतीक के रूप में रहेगा और प्रांत के प्रशासन में हस्तक्षेप करने का उसे अधिकार न होगा तो आज इस प्रश्न पर विचार करना कि वह मनोनीत रहे या निर्वाचित, बिल्कुल महत्त्व नहीं रखता।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** माननीय सदस्य क्या संशोधन को स्वीकार कर रहे हैं?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं इसे सभा पर छोड़ रहा हूं।

***अध्यक्ष:** तो श्री ब्रजेश्वर प्रसाद द्वारा पेश किये गये संशोधन नं. 2015 पर मैं राय लेता हूं।

प्रस्ताव यह है कि:

> ''अनुच्छेद 131 के स्थान पर निम्नलिखित अंश रखा जाये:
>
> '131. राज्य के राज्यपाल को राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा नियुक्त करेगा।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** मेरा ख्याल है कि इस संशोधन के पास हो जाने पर, इस अनुच्छेद से संबंध रखने वाले अन्य सभी संशोधन स्वत: समाप्त हो जाते हैं अत: अब मैं अनुच्छेद के संशोधित रूप पर मत लेता हूं।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 131, अपने संशोधित रूप में विधान का अंग माना जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 131 को, इसके संशोधित रूप में, विधान में शामिल किया गया।

अनुच्छेद 132

***अध्यक्ष:** इस अनुच्छेद पर हमारे सामने बहुत से संशोधन आये हैं। चूंकि हमने एक विकल्प के पक्ष में निर्णय कर लिया है, दूसरे विकल्प से संबंध रखने वाले सभी संशोधन खुद-ब-खुद खत्म हो जाते हैं। इसलिये हम केवल उन्हीं संशोधनों को लेंगे कि जिनका कि संबंध इस प्रस्तावित अनुच्छेद से है। पहला संशोधन है नं. 2033 का जो कि ब्रजेश्वर प्रसाद के नाम से है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं इसे नहीं पेश कर रहा हूं।

***अध्यक्ष:** डा. अम्बेडकर का एक संशोधन है जिसे वह अब पेश करेंगे।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं श्रीमान्:

''कि संशोधन सूची के संशोधन नं. 2033 और 2041 के प्रसंग में, जो अनुच्छेद 132 के संबंध में दिये गये हैं, निम्नलिखित अनुच्छेद रखा जाये:

'राज्यपाल की पदावधि.—132. (1) राष्ट्रपति के प्रसाद-पर्यन्त राज्यपाल पद धारण करेगा।

(2) राज्यपाल राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा।

(3) इस अनुच्छेद के पूर्वगामी उपबंधों के अधीन रहते हुए राज्यपाल अपने पद ग्रहण की तारीख से पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा।

परंतु अपने पद की अवधि की समाप्ति हो जाने पर भी राज्यपाल अपने उत्तराधिकारी के पदग्रहण तक पद धारण किये रहेगा।''

अब यह जो अनुच्छेद है श्रीमान्...

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान्, संशोधन नं. 2033 अभी पेश नहीं हुआ है। दूसरा संशोधन है नं. 2041 जिस पर यह संशोधन रखा गया है पर यह नं. 2041 भी अभी नहीं पेश किया गया है।

***अध्यक्ष:** हां, यह संशोधन तो अभी तक पेश नहीं हुआ है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** संशोधन नं. 2041 तो डा. अम्बेडकर के नाम से ही है।

***अध्यक्ष:** हां, उसे वह रस्मी तौर पर पेश तो कर दें।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मैंने अभी यह कहा है कि उसकी जगह मैं यह संशोधन रख रहा हूं।

***अध्यक्ष:** डा. अम्बेडकर संशोधन नं. 2041 पेश कर रहे हैं।

***पं. ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): प्रथा यह रही है कि इन सभी संशोधनों के संबंध में यह मान लिया जाता है कि वह पेश हो चुके हैं और उन पर संशोधन रखने का किसी भी सदस्य को अधिकार है।

***अध्यक्ष:** पर इस प्रथा पर हम लोग तो नहीं चलते आ रहे हैं।

खैर, आप अपने संशोधन को ही पेश कीजिये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं श्रीमान्:

''कि अनुच्छेद 132 के स्थान पर निम्नलिखित अनुच्छेद रखा जाये:

'132. राष्ट्रपति के प्रसाद-पर्यन्त राज्यपाल पद धारण करेगा।' ''

सभा से मैं सिफारिश करता हूं कि वह इस संशोधन को स्वीकार करे। इसके अलावा मुझे और कुछ नहीं कहना है।

***अध्यक्ष:** अगर यह संशोधन स्वीकृत हो जाता है तो अन्य सभी संशोधन स्वत: गिर जाते हैं। अत: इस संशोधन को हम ऐसा समझ लेते हैं कि इसमें बाकी सभी आ जाते हैं।

संशोधन और अनुच्छेद पर अब बहस हो सकती है।

***प्रो. के.टी. शाह** (बिहार : जनरल): तो मेरा संशोधन नं. 2034 क्या पेश ही न हो पायेगा? इसमें यह कहा गया है कि राज्यपाल हटाया न जा सकेगा। इसलिये यह संशोधन तो प्रस्तावित संशोधन के अंदर नहीं आ सकता है।

***अध्यक्ष:** अगर पांच वर्ष की अवधि स्वीकृत हो जाती है तो यह संशोधन कहां रह जाता है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मुख्य प्रश्न यह है कि जब राज्यपाल राष्ट्रपति के प्रसाद पर्यन्त पद धारण करेगा तो राष्ट्रपति द्वारा वह हटाया भी जा सकता है या नहीं।

***अध्यक्ष:** अगर डा. अम्बेडकर का संशोधन पास हो जाता है तो संशोधन नं. 2034 ठहरता ही कहां है? हां, प्रो. शाह अगर अपने संशोधन पर बोलना चाहें तो बोल सकते हैं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** दोनों ही संशोधन पेश कर दिये जायें और फिर सभा इनमें से एक को चुन लें।

***अध्यक्ष:** अगर प्रो. शाह ऐसा चाहते हैं तो इसे पेश कर सकते हैं।

***प्रो. के.टी. शाह:** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं:

> ''कि अनुच्छेद 132 में 'पद' (office) शब्द के बाद जहां कि वह दूसरी बार आता है और इस अवधि के अन्दर वह अपने पद से हटाया न जा सकेगा। शब्द रख दिये जायें।''

संशोधित अनुच्छेद का स्वरूप यह होगा:

> ''शासक (राज्यपाल) अपनी पद प्रवेश तिथि से पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा और इस अवधि के अन्दर वह पद से हटाया न जा सकेगा।''

जैसा कि मैं समझता हूं, यह संशोधन मूलत: इस योजना से भिन्न है कि राज्यपाल राष्ट्रपति के प्रसाद-पर्यन्त पद धारण करेगा। सभा ने अभी एक प्रस्ताव पास किया है जिसके अनुसार राज्यपाल राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जायेगा और अब इस प्रस्ताव पर कोई आपत्ति करना असम्भव है। इस संबंध में मैं यह बता देना चाहता हूं कि इस बात को देखते हुए कि राज्यपाल के निर्वाचन की व्यवस्था न करके हमने उसको मनोनीत करने की व्यवस्था की है, हमें उसे सर्वथा राष्ट्रपति की मरजी पर न छोड़ देना चाहिये। कम से कम हमें यह तो देखना ही चाहिये—अगर हमें उसे प्रांत में संवैधानिक प्रतीक के रूप में रखना है, अगर उसे प्रांतीय मंत्रिमंडल की राय पर चलाना है और मनोनीतकरण संबंधी सिद्धांत के विरुद्ध जो कुछ भी आपत्ति है अगर उसे हमें दूर करना है—कि कम से कम तब तक जब तक कि विधान के अनुसार, अपने मंत्रिमंडल की राय लेकर वह ठीक-ठीक कार्य संचालन करता है, वह राष्ट्रपति की मरजी पर न छोड़ दिया जाये, जो प्रांत से दूर पर स्थित रहेगा और जो कि स्थानीय अधिकारी न होकर एक राष्ट्रीय अधिकारी के रूप में रहेगा। अभी हमारे एक पूर्व वक्ता ने कहा है कि अगर राज्यपाल को मनोनीत करने का ही सिद्धांत यहां रखा जाता है तो वह जरूर होना चाहिये कि संबंधित प्रांत के मुख्यमंत्री के परामर्श के आधार पर ही उसकी नियुक्ति हो। जब तक कि यह रूढ़ि (मुख्यमंत्री के परामर्शानुसार ही राज्यपाल नियुक्त किया जाये) विकास न पा जाये मेरे संशोधन में जो व्यवस्था है उस पर चलना और भी जरूरी है। मैं नहीं कह सकता कि ऐसी रूढ़ि यहां चल पड़ेगी, पर अगर चालू हो जाये तो भी और उस सूरत में तो खासतौर पर, यह

बड़ा जरूरी होगा कि प्रांत के बाहर के किसी केन्द्रस्थ अधिकारी को यह अधिकार न रहे कि वह राज्यपाल को हटा दे। जब तक राज्यपाल प्रांत के संवैधानिक सलाहकारों की सलाह के अनुसार काम करता है, तब तक मेरी समझ से, यह होना चाहिये कि इस अनुच्छेद के अनुसार जो उसकी पांच साल की पदावधि रखी गई है उसके अन्दर वह अपदस्थ नहीं किया जा सके।

स्वेच्छा से या अन्य आकस्मिक स्थितियों के पैदा होने पर राज्यपाल के पदत्याग के बारे में, अवश्य ही एक प्रावधान रखा गया है जिसके अनुसार राज्यपाल को हटाया जा सकता है। पर उस प्रावधान के अधीन रहते हुए और तदनुसार इस समस्त विधान के अधीन रहते हुए, उसके पद की अवधि पूरे पांच वर्ष की ही होनी चाहिये न कि राष्ट्रपति प्रसाद-पर्यन्त।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** हम तो यहां यह प्रावधान स्वीकृत कर चुके हैं कि राज्यपाल राष्ट्रपति प्रसाद-पर्यन्त पद धारण करेगा।

***प्रो. के.टी. शाहः** यह अभी पास कहां हुआ है? अगर इसी बिना पर वह पास समझा जाता है कि आपने उसे पेश कर दिया है तो मुझे आपत्ति नहीं है।

***अध्यक्षः** एक दूसरा संशोधन है श्री गुप्ते का जो अभी पेश होना बाकी है। मैं देखता हूं कि वह उसे नहीं पेश कर रहे हैं। उसके बाद आते हैं, सैयद जाफर इमाम और श्री नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन। ये लोग भी अपने संशोधनों को नहीं पेश कर रहे हैं।

अब प्रो. शाह अपने नं. 2048, 2049 और 2051 के संशोधनों को पेश कर सकते हैं।

प्रो. के.टी. शाहः मैं यह प्रस्ताव रखता हूं श्रीमान् कि:

> ''अनुच्छेद 132 के परन्तुक के खंड (ख) में 'संविधान को अतिक्रमण करने पर' शब्दों के बाद 'या अगर राज्यद्रोह का या संघ की रक्षा सुरक्षा या अखंडता के विरुद्ध अपराध करने का दोषी पाया जाये तो' शब्द जोड़ दिये जायें।

अगर यह संशोधन स्वीकृत हो जाता है तो यह होगा कि राज्यपाल का निष्कासन उसी हालत में होगा जबकि वह स्वत: पद त्याग कर दे या कतिपय अपराधों का वह दोषी पाया जाये। कतिपय संभव स्थितियों के संबंध में प्रावधान करने के लिये ही यह संशोधन रखा जा रहा है। इसका यह मतलब नहीं है कि हम यह उम्मीद करते हैं या यह कल्पना करते हैं कि ऐसे उच्च पदस्थ व्यक्ति के लिये यह संभव होगा कि साधारणतया ऐसे अपराधों का दोषी पाया जायेगा। सभा से इस संशोधन को स्वीकार करने की मैं सिफारिश करता हूं।

अब मैं अपना संशोधन नं. 2049 पेश करता हूं। यह यों है:

> ''कि अनुच्छेद 132 में, वर्तमान परन्तुक (ख) के बाद निम्नलिखित नया परन्तुक जोड़ा जाये:

[प्रो. के.टी. शाह]

'(ख 1) राज्यपाल, समुचित रूप से प्रमाणीकृत शारीरिक या मानसिक अक्षमता के कारण, या घूसखोरी अथवा भ्रष्टाचार का दोषी पाया जाने पर या अनुच्छेद 137 में प्रावहित स्थिति के लिये अपने पद से निष्कासित किया जा सकता है।' ''

ये सब विशेष स्थितियां है जो संभव है कि कभी उत्पन्न हो जायें। इसलिये इन सब सूरतों में राज्यपाल को निष्कासित करने का अधिकार विधान द्वारा प्राप्त रहना चाहिये। मेरी समझ से यह अनुच्छेद उन सब अवसरों का उल्लेख करने के लिए ही रखा जा रहा है जब राज्यपाल को निष्कासित करने के लिये असाधारण शक्तियों का प्रयोग करना पड़े। घूसखोरी या भ्रष्टाचार का अपराधी पाये जाने पर अथवा मानसिक या शारीरिक अक्षमता के आधार पर जिसके संबंध में न केवल शक हो बल्कि जो समुचित रूप से प्रमाणीकृत हो, राज्यपाल स्वत: अपने पद से निष्कासित हो जायेगा।

मैं अपना दूसरा संशोधन भी पेश कर देता हूं। वह यों है:

''कि अनुच्छेद 132 के बाद निम्नलिखित नया अनुच्छेद 132 (क) जोड़ दिया जाये:

'132-क. राज्यपाल की पदावधि की समाप्ति के पूर्व, उसकी मृत्यु हो जाने पर या नियमानुसार उसके त्याग पत्र दे देने और उसके स्वीकृत हो जाने पर अथवा उन अन्य कारणों के पैदा होने पर जिनका विधान में एतदर्थ उल्लेख है, राज्यपाल का पद रिक्त हो जायेगा। किसी भी समय राज्यपाल का पद रिक्त हो जाने की हालत में, रिक्तता की अवधि में राज्यपाल के प्रकार्यों को सम्पादित करने का जो प्रबंध किया जायेगा वह तभी तक लागू रहेगा जब तक कि इस विधान में प्रावहित रीति से दूसरे राज्यपाल का चुनाव न हो जाये।' ''

इस प्रयोजन के लिये राज्यपाल को नियुक्त न किया जायेगा बल्कि उसका निर्वाचन किया जायेगा। यह प्रावधान भी स्थिति विशेष के लिये ही किया जा रहा है अर्थात् अन्तर्वर्ती काल के लिये किया जा रहा है। मृत्यु या त्यागपत्र या विधान में दिखाये गये अन्य कारणों से राज्यपाल का पद रिक्त हो जाने पर जब तक दूसरा राज्यपाल न उपलब्ध हो जाये तब तक के लिये यह प्रावधान किया जा रहा है। इस अन्तर्वर्ती काल के लिये जब तक कि एक राज्यपाल की व्यवस्था न हो जाये, उसके प्रकार्यों को पूरा कराने के लिये एक न एक प्रावधान करना ही होगा। आशा है इस सरल प्रस्ताव को सभा स्वीकार करेगी।

***प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना:** डा. अम्बेडकर ने जो संशोधन पेश किया है श्रीमान् उससे अनुच्छेद 132 के मूल प्रावधान में बड़ा भारी परिवर्तन आ जाता है। मुझे इसका भी अफसोस है कि उन्होंने इस बात का कोई कारण भी यहां न ही बताया है कि ऐसा बुनियादी परिवर्तन वह किस लिए चाहते हैं। अभी-अभी हमने एक प्रावधान स्वीकार किया है जिसके अनुसार राज्यपाल राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किया जायेगा। हम इस प्रावधान के संबंध में ही यह महसूस कर रहे हैं कि इसको पास करना लोकतंत्रीय सिद्धांत का परित्याग करना है। और अब एक दूसरा प्रावधान इस आशय का रखा जा रहा है कि

राज्यपाल राष्ट्रपति प्रसाद-पर्यन्त ही पद धारण करेगा। सर्वोच्च न्यायालय के संबंध में हमने यह प्रावधान किया है कि उस न्यायालय के न्यायाधीश जब एक बार नियुक्त हो जायेंगे तो उनका निष्कासन तभी हो सकेगा जबकि संसद के दोनों आगारों द्वारा, उनमें उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से समर्थित, अभिलेख राष्ट्रपति के समक्ष रखा जाये। राज्यपाल के संबंध में आप एक भिन्न ही प्रावधान कर रहे हैं। यह प्रावधान तो बड़ा ही असाधारण प्रतीत होता है। उससे तो राज्यपाल की स्वतंत्रता बिल्कुल जाती रहती है। वह राष्ट्रपति का बताया हुआ आदमी रहेगा जिसका मतलब यह हुआ कि वह प्रधानमंत्री तथा केन्द्रीय अधिकारारूढ़ दल का ही आदमी रहेगा। जब एक बार राज्यपाल की नियुक्ति हो जाती है तो मैं नहीं समझता कि वह अपनी पूरी पांच साल की अवधि तक क्यों नहीं अपने पद पर बना रहे और क्यों यह व्यवस्था की जाये कि राज्यपाल चाहे तो उसका निष्कासन कर दे? इसका तो यही मतलब होगा कि अपने पद पर बना रहने के लिये वह हमेशा राष्ट्रपति का मुंह देखता रहेगा और सदा उसका अनुज्ञाकारी बना रहेगा। वह कभी स्वतंत्र मन होकर रह ही नहीं सकता है। फिर उसकी प्रतिष्ठा क्या रहेगी? डा. अम्बेडकर ने इसका कोई कारण नहीं बताया है कि वह यह परिवर्तन क्यों कर रहे हैं? राज्यपाल के निर्वाचन की व्यवस्था तो आपने नहीं रखी यह ठीक है पर अब उसे राष्ट्रपति के प्रसाद पर क्यों अवलम्बित छोड़ते हैं? मूल अनुच्छेद में यह कहा है कि:

> ''संविधान का अतिक्रमण करने पर राज्यपाल, इस संविधान के अनुच्छेद 137 में प्रावहित रीति से किये हुए प्राभियोग द्वारा पद से निष्कासित किया जा सकेगा।''

इसका मतलब यह हुआ कि दोनों सदनों द्वारा प्राभियोग लाये जाने पर ही राज्यपाल निष्कासित किया जा सकेगा। अब आप यह प्रावधान कर रहे हैं कि राज्यपाल राष्ट्रपति के प्रसाद-पर्यन्त ही पद धारण करेगा। ऐसे राज्यपाल को तो कोई आजादी ही न रह जायेगी और केन्द्र उसके जरिये कुछ मनमानी करने की कोशिश कर सकता है। मनोनीत होने पर भी कम से कम वह स्वतंत्र होकर तो काम कर सकता है अगर यह व्यवस्था हो कि नियुक्ति के बाद उसे निष्कासित न किया जा सके। पर यह व्यवस्था करके कि वह राष्ट्रपति प्रसाद-पर्यन्त ही पद धारण करेगा, आप उसकी स्वतंत्रता ही छीन लेते हैं। यह तो एक बड़ा ही गंभीर परिवर्तन आप करने जा रहे हैं। आशा है सभा इस पर खूब सावधानी से विचार करेगी। अगर ऐसा करने का कोई प्रबंध कारण नहीं बताते हैं तो आशा है डा. अम्बेडकर अपने इस संशोधन को वापिस ले लेंगे।

***श्री लोकनाथ मिश्र** (उड़ीसा : जनरल): अध्यक्ष महोदय, अब जब यह निर्णय कर लिया गया है कि राज्यपाल राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जायेगा, तो यह लाजमी है कि विधान के अन्य संबंधित प्रावधानों में भी तदनुसार संशोधन कर लिया जाये और इस दृष्टिकोण से मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं जिसे डा. अम्बेडकर ने यहां अभी उपस्थिति किया है। इस संशोधन में यह कहा गया है कि राज्यपाल राष्ट्रपति के प्रसाद-पर्यन्त ही पद धारण करेगा और जब भी राष्ट्रपति उससे अप्रसन्न हो जायेगा तो वह पद से अलग हो जायेगा। जब किसी की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है तो समुचित यही है कि राष्ट्रपति को यह अधिकार होना चाहिये कि अप्रसन्न होने पर वह उसे निष्कासित भी न कर सके। पर राज्यपाल के निर्वाचन की व्यवस्था को हटा देने से खामी आ गई है

[श्री लोकनाथ मिश्र]

उसे दूर करने के लिये, अच्छा यह होता कि राज्य के विधान मंडलों को न केवल संविधान के अतिक्रमण के लिये ही बल्कि किसी कदाचार के लिये भी राज्यपाल के विरुद्ध प्राभियोग लाने का अधिकार दिया जाता। ''कदाचार'' शब्द का प्रयोग यहां मैंने जानबूझकर किया है और इसलिये कि जब प्रांत के बाहर का ही व्यक्ति राज्यपाल नियुक्त किया जाता है तो यह जरूरी है कि प्रांतवासियों को कम से कम यह अधिकार तो दिया जाये कि अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के द्वारा वे उसके कार्यकलाप पर निगाह रखें और उसकी आलोचना करें। अगर यह अधिकार दिया गया होता या दूसरे शब्दों में यों कहिये कि राज्य के विधान मंडलों द्वारा, राज्यपाल के विरुद्ध प्राभियोग लाने का प्रावधान रखा गया होता तो राष्ट्रपति द्वारा अनुचित नियुक्ति के विरुद्ध एक संरक्षण की व्यवस्था हो जाती। मनोनीत राज्यपाल को रखने के विरुद्ध यहां जो प्रमुख आपत्तियां पेश की गई हैं उनमें एक यह भी है कि वह एक ऐसा व्यक्ति होगा जिसका प्रांत से न कोई सरोकार होगा न कोई लेना देना होगा, उसका जनता से कोई संबंध न रहेगा और प्रांत के नागरिकों की पहुंच से वह परे रहेगा इसलिये जब तक राष्ट्रपति को, संघ के प्रधान और प्रांत के मुख्यमंत्री को यह खुश रखता है चैन की बंसी बजाता रहेगा। पर ये बातें उस पर बिल्कुल ही लागू नहीं होती हैं। राज्यपाल के निष्कासन को अगर न केवल राष्ट्रपति के प्रसाद पर अवलम्बित रखकर अगर राज्य के विधान मंडल के प्रसाद पर भी अवलम्बित रख दिया जाता तो बहुत अच्छा होता क्योंकि राज्य का विधान मंडल वहां की जनता का प्रतिनिधि होता है। यह व्यवस्था उस बुराई के विरुद्ध एक संरक्षण होती जो कि इस प्रावधान से, कि राष्ट्रपति राज्यपाल को मनोनीत करेगा पैदा होती है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** स्थिति यों है श्रीमान्, राज्यपाल को निष्कासित करने का अधिकार तो राष्ट्रपति को विधान में दे दिया गया है पर प्रो. शाह यह चाहते हैं कि विधान में उन बातों को भी लिपिबद्ध कर दिया जाये जिनके आधार पर राज्यपाल निष्कासित किया जा सकता है। मेरा तो यह ख्याल है कि जब आपने राष्ट्रपति को यह व्यापक अधिकार दे दिया है कि वह राज्यपाल को हटा सकता है तो उसके अन्दर यह अधिकार भी आ जाता है कि घूसखोरी या भ्रष्टाचार अथवा संविधान का अतिक्रमण करने के लिये या अन्य किसी कारण से जिसके संबंध में राष्ट्रपति को यह महसूस हो कि उसे हटा देना चाहिये, वह उसे निष्कासित कर सकता है। इसलिये इन सब बातों का विधान में स्पष्टोल्लेख करके उसे बोझिल बनाना बिल्कुल अनावश्यक सा प्रतीत होता है जबकि राष्ट्रपति के लिए सर्वथा संभव रहेगा कि इन कारणों के लिये राज्यपाल को हटा दे क्योंकि यहां यह कहा गया है कि राज्यपाल राष्ट्रपति प्रसाद-पर्यन्त पद धारण करेगा। इसलिये मैं तो यह समझता हूं कि सर्वथा अनावश्यक है कि उन बातों का विधान में क्रमबद्ध उल्लेख दिखाया जाये जिनके लिये राष्ट्रपति राज्यपाल को हटा सकता है।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

> ''कि संशोधन सूची के संशोधन नं. 2033 और 2041 के प्रसंग में जो कि अनुच्छेद 132 के संबंध में दिये गये हैं, निम्नलिखित अनुच्छेद रखा जाये:
>
> 'राज्यपाल की पदावधि–132 (1) राष्ट्रपति के प्रसाद-पर्यन्त राज्यपाल पद धारण करेगा।

(2) राज्यपाल राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा।

(3) इस अनुच्छेद के पूर्वगामी उपबंधों के अधीन रहते हुए राज्यपाल अपने पद ग्रहण की तारीख से पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा।

परन्तु अपने पद की अवधि की समाप्ति हो जाने पर भी राज्यपाल अपने उत्तराधिकारी के पद ग्रहण तक पद धारण किये रहेगा।' ''

संशोधन स्वीकार हुआ।

***अध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 132 अपने संशोधित रूप में, विधान का अंग माना जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 132 को संशोधित रूप में संविधान में शामिल किया गया।

अनुच्छेद 133

***अध्यक्ष:** इस आशय के कई संशोधन आये हैं कि इस अनुच्छेद को हटा दिया जाये। इन पर विचार करने की जरूरत नहीं है। ये तो निषेधात्मक संशोधन है इसलिये मैं यह मान लेता हूं कि इनको पेश करने की जरूरत नहीं है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं तो यह कहूंगा कि पूर्ववर्त्ती अनुच्छेद के प्रसंग में यह सर्वथा अनावश्यक है।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 133 को विधान का अंग माना जाये।''

प्रस्ताव अस्वीकृत रहा।

अनुच्छेद 133 विधान से हटा दिया गया।

अनुच्छेद 134

***अध्यक्ष:** पहले विकल्प को तो हमने हटा दिया है और अब उन्हीं संशोधनों को लेना है जो दूसरे विकल्प के संबंध में आये हैं। मेरा ख्याल है कि संशोधन नं. 164 के अन्दर जो डा. अम्बेडकर के नाम में है, अन्य सभी आ जाते हैं।

माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर: मैं यह प्रस्ताव रखता हूं श्रीमान्:

''कि संशोधन सूची के संशोधन नं. 2061 के संबंध में, अनुच्छेद 134 के स्थान पर निम्नलिखित अंश रखा जाये:

'राज्यपाल नियुक्त होने के लिये योग्यतायें:—कोई व्यक्ति राज्यपाल नियुक्त होने का पात्र न होगा जब तक कि वह भारत का नागरिक न हो और 35 वर्ष की आयु पूरी न कर चुका हो।' ''

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

मैं यह समझ लेता हूं कि श्रीमान् कि संशोधन उपस्थित किया जा चुका है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, यहां सभापति और सभा किसी संशोधन के बदले में अन्य संशोधन पेश करने की अनुमति दे सकते हैं।

***अध्यक्ष:** समूचा संशोधन पढ़ना आपके लिये जरूरी नहीं है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं संशोधन नं. 2061 को पेश करता हूं। श्रीमान् और यह भी प्रस्ताव करता हूं कि इस संशोधन के स्थान पर निम्नलिखित अंश रखा जाये:

> 'राज्यपाल नियुक्त होने के लिए योग्यतायें.—''कोई व्यक्ति राज्यपाल होने का पात्र न होगा जब तक कि यह भारत का नागरिक न हो और 35 वर्ष की आयु पूरी न कर चुका हो।''

(संशोधन नं. 2062, 2065 से 2071, 2075 से 2080, 2082, 2084, 2087, 2089 और 2090 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

> ''कि संशोधन सूची के संशोधन नं. 2061 के संबंध में, अनुच्छेद 134 के स्थान पर निम्नलिखित अंश रखा जाये:
>
> 'राज्यपाल नियुक्त होने के लिये योग्यतायें.—''कोई व्यक्ति राज्यपाल होने का पात्र न होगा जब तक कि वह भारत का नागरिक न हो और 35 वर्ष की आयु पूरी न कर चुका हो।' ''

संशोधन स्वीकार हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

> ''कि अनुच्छेद 134 को उसके संशोधित रूप में विधान का अंग समझा जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत रहा।

अनुच्छेद 134 संशोधित रूप में विधान में शामिल किया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 135 को ले सकते हैं।

***श्री ए. थानु पिल्ले:** (ट्रावनकोर): क्या मैं यह जान सकता हूं श्रीमान्, कि इस अनुच्छेद का खंड (2) रहेगा या नहीं रहेगा?

***अध्यक्ष:** समूचे अनुच्छेद के स्थान पर अब यह संशोधन रख लिया गया है।

***श्री ए. थानु पिल्लेः** संशोधन यों है, श्रीमान्।

''कि संशोधन सूची के संशोधन नं. 2061 के संबंध में, अनुच्छेद 134 के स्थान पर निम्नलिखित अंश रखा जाये।'' मूल संशोधन यों थाः

'कि अनुच्छेद 134 के वर्तमान खंड (1) के स्थान पर निम्नलिखित अंश रखा जाये।'

इसका प्रभाव तो शायद यह हुआ कि केवल खंड (1) में संशोधन हो गया है और खंड (2) ज्यों का त्यों बना रहेगा।

***अध्यक्षः** जो संशोधन पास किया गया है उसका प्रभाव यह पड़ता है कि समूचे अनुच्छेद 134 की जगह यह संशोधित अनुच्छेद रखा जायेगा।

हां अब हम अनुच्छेद 135 पर आते हैं।

अनुच्छेद 135

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 135, विधान का अंग समझा जाये।''

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं श्रीमान्:

''कि अनुच्छेद 135 के खंड (1) में न तो संसद का और न 'प्रथम अनुसूची में उस समय उल्लिखित रहे किसी राज्य के विधान मंडल का' शब्दों की जगह 'न तो संसद के किसी सदन का और न प्रथम अनुसूची में उस समय उल्लिखित रहे किसी राज्य के विधान मंडल के सदन का' शब्द रखे जायें।

यह एक केवल औपचारिक संशोधन है। इसके बाद अब मैं यह प्रस्ताव रखता हूं:

''कि अनुच्छेद 135 के खंड (1) में:

(क) 'संसद का या किसी राज्य के विधान मंडल का' शब्दों की जगह 'संसद के किसी सदन का अथवा किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का' शब्द रखे जायें।

(ख) 'सदन का अथवा उस विधान मंडल का अपना स्थान, जैसी भी स्थिति हो' शब्दों की जगह 'उस सदन का अपना स्थान' शब्द रखे जायें।''

और अब मैं यह प्रस्ताव रखता हूं श्रीमान्:

''कि अनुच्छेद 135 के खंड (2) में, 'परिलाभ का अन्य कोई पद अथवा स्थिति' शब्दों की जगह 'लाभ का अन्य कोई पद' शब्द रखे जायें।''

(संशोधन नं. 2092 और 2095 पेश नहीं किये गये।)

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरा प्रस्ताव है:

> ''कि अनुच्छेद 135 के खंड (3) में 'राज्यपाल के लिए पदावास रहेगा और' (The Governor shall have an official residence and) शब्दों को हटा दिया जाये।''

***अध्यक्ष:** तब तो अनुच्छेद में जो ''There'' शब्द आया है उसे भी हटा देना चाहिये।

***श्री एच.वी. कामत:** 'There' शब्द रहेगा। ''There shall be paid to the Governor etc.'' इस तरह अनुच्छेद का रूप होगा। मैं नहीं समझता कि अपना विधान, ऐसी विस्तार की बातों से क्यों बोझिल बनाया जाये। राज्यपाल के पदावास का प्रश्न, मेरी समझ से, एक बड़ा ही नगण्य प्रश्न है। अगर राज्यपाल के पदावास का उल्लेख अपने विधान में न रखा जाता तो इससे विधान के महत्त्व में कोई कमी थोड़े ही आ जाती। यह तो साधारण समझ की बात है कि राज्यपाल को पदावास मिलेगा ही। हम यह कल्पना ही नहीं करते हैं कि राज्यपाल को सरकारी तौर पर कोई पदावास न दिया जायेगा। आखिर प्रांत के मुख्यमंत्री के संबंध में क्या हम यह नहीं समझते हैं कि उसे पदावास दिया जायेगा? पर हमने विधान में इसका कहां उल्लेख किया है? मैं नहीं कह सकता कि दुनिया के किसी महत्त्वपूर्ण विधान से ज्यों का त्यों उठाकर तो इस अनुच्छेद को यहां नहीं रख दिया गया है। मुझे ठीक मालूम है कि अमेरिकन विधान में प्रेसीडेंट या स्टेट गवर्नरों के पदावास का कोई उल्लेख नहीं है। मैं नहीं जानता कि किस देश के विधान से अनुप्राणित होकर डा. अम्बेडकर एवं मसौदा समिति के उनके साथियों ने इस मसले को विधान में लिपिबद्ध करना जरूरी समझा है।

***एक माननीय सदस्य:** आयरिश विधान से अनुप्राणित होकर।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** राष्ट्रपति के संबंध में अनुच्छेद 48 को हमने ठीक इसी रूप में पास किया है। यहां हम केवल अनुच्छेद 48 का अनुगमन मात्र कर रहे हैं।

***श्री एच.वी. कामत:** मैं आपकी इस बात की ओर आ ही रहा हूं। मैं नहीं समझता कि सिर्फ इसलिए कि राष्ट्रपति के पदावास का उल्लेख विधान में आ चुका है, राज्यपाल के पदावास का भी उल्लेख कर देना क्यों जरूरी है। राष्ट्रपति के संबंध में पदावास का उल्लेख आ जाने से क्या यह तर्क संगत हो जाता है, जरूरी हो जाता है कि राज्यपाल के पदावास का उल्लेख किया ही जाये? या मैं यों कहूंगा कि चूंकि एक छोटी सी गलती—गलती मुझे न कहना चाहिये—हो चुकी है इसलिए क्या उसको दुहरा देना भी जरूरी है?

अनुच्छेद 48 पर वाद-विवाद के सिलसिले में यह प्रश्न मैंने उठाया था। बहस का जवाब देते हुए डा. अम्बेडकर ने जो कुछ कहा उससे इस प्रश्न का कोई समुचित या समझ में आने वाला जवाब न मिल सका। उनके लाभ के लिये और उनकी याददास्त को ताजा करने के लिये, उनके भाषण से आवश्यक अंश उद्धृत करके, अगर आज्ञा हो

तो मैं सुना दूं श्रीमान्। राष्ट्रपति के पदावास के संबंध भी उनका उत्तर कोई संतोषजनक नहीं था। हमने मनोनीत राज्यपाल रखने की व्यवस्था की है। राष्ट्रपति तो राज्यपाल से कहीं श्रेष्ठ और महिमान्वित अधिकारी होगा। अवश्य ही मुझे इसका खेद होता है कि राज्यपाल के पदावास का यहां आखिर उल्लेख ही क्यों किया जा रहा है। राष्ट्रपति के पदावास के संबंध में बहस का जवाब देते हुए अम्बेडकर साहब ने यह फरमाया था:

> ''पर श्री कामत से मैं यह पूछना चाहता हूं। आप यह चाहते हैं या नहीं कि राष्ट्रपति को एक पदावास दिया जाये और यह कि संसद इसके लिये प्रावधान करे? और अगर हमने इस व्यवस्था को खुद विधान में लिपिबद्ध कर दिया है तो इसमें क्या बड़ी गलती कर दी है?''

मैं यह नहीं कह रहा हूं कि यह कोई गलती है। विधान में पदावास का उल्लेख करके हम कोई गलती नहीं कर रहे हैं। पर मैं कहता यह हूं कि विधान में इसका उल्लेख लाने की आखिर आवश्यकता ही क्या है? आपने आगे फरमाया था ''यह तो एक मामूली समझ की बात है।'' (मुझे आश्चर्य है कि कौन सी समझ की बात उनके दिमाग में थी) ''मैं श्री कामत से यह पूछना चाहता हूं कि आप इस बात को मंजूर करते हैं या नहीं कि राष्ट्रपति को यह पदावास मिलना चाहिये?'' इस पर दखल देते हुए मैंने यह कहा था, ''क्या मैं यह जान सकता हूं कि प्रधानमंत्री को पदावास दिया जाएगा या नहीं?'' आपने इसका कोई जवाब नहीं दिया और आगे फरमाया ''अगर पदावास देने की बात आप स्वीकार करते हैं तो मेरी समझ से यह महत्त्व शून्य है कि आप इसका उल्लेख विधान में कर दें या इस बात को भावी संसद के निर्णयार्थ छोड़ दें, हमने इस मसले को विधान में क्यों लिपिबद्ध कर दिया है इसका कारण यह है कि भारत शासन अधिनियम में और भारत शासन अधिनियम की दूसरी अनुसूची द्वारा प्रदत्त अधिकार के अधीन सेक्रेटरी ऑफ स्टेट द्वारा निकाले गये कतिपय परिषद् के आदेशों में, गवर्नर जनरल और गवर्नरों के पदावासों का उल्लेख रखा गया है''। सिर्फ इसलिये कि भारत-शासन अधिनियम में इसका उल्लेख रखा गया है, क्या हमारे लिये यह जरूरी है कि हम अन्धे होकर इसकी नकल कर लें और उस पर आगे सोच विचार ही न करें? मैं समझता हूं कि अपना विधान, जैसा मैं कह चुका हूं, बड़ा ही बृहदाकार बन गया है और इसमें विस्तार की अनावश्यक बातें कर दी गई हैं। हम पदावास का विधान में उल्लेख इसलिये कर रहे हैं कि हम भारत शासन अधिनियम के आधार पर चल रहे हैं चाहे हमारा यह चलना तर्कसंगत हो या न हो। हम पदावास के उल्लेख को आसानी से छोड़ सकते थे। उसके छोड़ने में लाभ भी था और ऐसा करना तर्कसंगत भी था।

एक आखिरी बात और कहनी है। राज्यपाल को एक से ज्यादा पदावास हो सकते हैं। मान लीजिये उसे दो पदावास देने हैं और विधान में जिक्र है एक का तो उस सूरत में क्या होगा? आशा है कि डा. अम्बेडकर और उसके बुद्धिमान् साथी लोग इस पर विचार करेंगे। इन शब्दों के साथ मैं अपना संशोधन पेश करता हूं।

(संशोधन नं. 2097 से 2102 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** मूल अनुच्छेद और संशोधनों पर अब बहस हो सकती है।

***श्री बी. दासः** अध्यख महोदय, इस अनुच्छेद द्वारा भत्ते, मानदेय (honorarium) और आवास की व्यवस्था की गई है। समझा यही जाता है कि राज्यपाल कांग्रेस के आदमी होंगे या कांग्रेस के आदेशों को मानने वाले होंगे। यद्यपि माननीय मित्र डा. अम्बेडकर ने अपना वह संशोधन यहां पेश नहीं किया है जिसमें राज्यपालों को चार हजार पांच सौ रुपये प्रतिमाह वेतन देने की बात कही गई है, पर गवर्नर, गवर्नर-जनरल अथवा राष्ट्रपति के वेतन का प्रश्न कुछ महीनों से हम में से अधिकांश लोगों को व्यग्र किये हुए हैं। अगर राज्यपालों को कांग्रेस विचारधारा का व्यक्ति रहना है, उन्हें कांग्रेस के आदर्शों पर चलना है, इस महान् आदर्श पर चलाना है कि प्रत्येक कांग्रेसजन को 150 रुपये में ही अपना निर्वाह करना चाहिये, जिसका रास्ता हमारे सुयोग्य नेता श्री राजगोपालाचारी ने दिखाया है, तो यहां कम से कम कांग्रेसजनों को इस प्रश्न का समाधान हमेशा के लिए कर ही लेना होगा। हमारा गवर्नर-जनरल क्यों वर्तमान समय में आयकर से मुक्त 7,500 रुपया प्रति मास बतौर वेतन के ले? मसौदा समिति या डा. अम्बेडकर राज्यपालों के लिये 4,500 रुपये का वेतन क्यों निर्धारित करते हैं? हम यह मानते हैं कि आयकर की रकम इसमें से बाद में दे दी जाएगी।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान्, क्या इस अनुच्छेद के साथ हम अनुसूची को भी स्वीकार करने जा रहे हैं।

***अध्यक्षः** हम अनुसूची को नहीं पास करने जा रहे हैं।

***श्री बी. दासः** मैं सिद्धांत के संबंध में विचार कर रहा हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** उस पर विचार करने का अवसर हमें आगे चलकर मिलेगा।

***अध्यक्षः** उन्हें अपने तर्क का विस्तार करने दीजिये। वक्त आने पर मैं उन्हें रोक दूंगा।

***श्री बी. दासः** इस अनुच्छेद के स्वीकृत होते ही विधान मंडल को यह अधिकार मिल जायेगा कि वह वेतन निश्चित कर दे और जो कुछ हो रहा है वह हम सब जानते ही हैं। संसद ने गवर्नर जनरल का वेतन 7,500 रु. प्रति माह निश्चित कर ही दिया है और यह रकम आयकर से मुक्त रहेगी।

***अध्यक्षः** जो रकम यहां आप बता रहे हैं वह क्या सही है मिस्टर दास? मैं समझता हूं कि 5,500 रु. वेतन निश्चित हुआ है।

***श्री बी. दासः** नहीं श्रीमान्।

***कुछ माननीय सदस्यः** 5,500 रु. ही तय हुआ है।

***श्री बी. दास:** मुझे खेद है कि मेरी बात गलत थी। अस्तु मैं मित्रों के कथन को स्वीकार करता हूं। पर मुझ जैसे कांग्रेसमैन को, जिसके दिमाग में, यह विचार भरा गया हो कि कांग्रेस मंत्री के लिए 150 रु. माहवार पर्याप्त होना चाहिये, यह रकम तो बहुत ही बड़ी मालूम होती है। और फिर हम यह भी जानते हैं कि गवर्नर जनरल को भोज वगैरह देने के लिए 63 हजार रुपये अलग दिये जाते हैं।

***अध्यक्ष:** मेरी समझ से बेहतर होगा कि आप गवर्नर जनरल का हवाला यहां न दें।

***श्री बी. दास:** हर प्रांत के गवर्नर को पार्टी और भोज देने के लिये अलग से रुपये मिलते हैं। गरीब प्रांतों में इसके लिए करीब 6,000 हजार रुपये गवर्नर को दिये जाते हैं और बम्बई और मद्रास जैसे प्रांतों में तो यह रकम और भी बड़ी होगी। यह सारी रकम खर्च की जाती है। ब्रिटिश शान शौकत की नकल में और आडम्बर में। सर्वसत्ता सम्पन्न यह सभा क्या इस बात की अनुमति देगी या इसे पसंद करेगी कि गवर्नर लोग उतनी बड़ी रकम शान शौकत और आडम्बर में खर्च करें और बड़े-बड़े वेतन लें? हमारे केन्द्रस्थ मंत्री तीन हजार से ज्यादा नहीं पाते हैं फिर क्यों कोई कांग्रेस मैन तीन हजार से ज्यादा ले? मैं आशा करता हूं कि हमारे राज्यपाल देशभक्त आदमी होंगे। मैं जानता हूं कि सर की उपाधि के धारण करने वाले कई उदारचेता सज्जन गवर्नर बनाये गये हैं। तीन हजार की रकम उनके लिये काफी बड़ी रकम है और उस सूरत में जबकि सभी कुछ उनके लिए नया होगा, हिज एक्सेलेंसी कहलाने का और राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किये जाने का उन्हें गौरव प्राप्त होगा तो यह रकम मेरी समझ से उनके लिये पर्याप्त होनी चाहिए। मुझे दुख है कि पूर्वगामी खंडों पर जो वाद-विवाद हुआ उसमें मैं भाग न ले सका। पर उनसे जो निष्कर्ष निकलता है वह यही है कि ये मनोनीत गवर्नर जो वस्तुत: निठल्ले लोग हैं। अब राष्ट्रपति या गवर्नर जनरल के पास यह आवेदन करेंगे कि राज्यपाल पदों के लिए वे अभ्यर्थी हैं। मसौदा समिति ने और इस सभा ने अनुच्छेद 133 को मंजूर कर लिया है और इसके अनुसार ऐसे मनोनीत लोग हमेशा कहीं न कहीं गवर्नर ही बने रहेंगे। अनुच्छेद 133 का जो मूल मसौदा था उसमें यह कहा गया था कि जो व्यक्ति राज्यपाल के पद पर रह चुका है वह उस पद के लिए केवल एक बार पुनर्नियुक्त किये जाने का पात्र होगा।

एक दूसरे अनुच्छेद में हमने सर्वोच्च न्यायालय के संबंध में विचार किया था। उस सिलसिले में कहा गया था कि हम नहीं चाहते हैं कि न्यायाधीश लोग अपने पदों को स्वीकार करें और फिर डा. अम्बेडकर या सरदार पटेल के निवास स्थान का चक्कर काटें और उनकी मुंहजोई करें। अब हम यह देखते हैं कि देश में हम निठल्लों का ऐसा वर्ग पैदा करने जा रहे हैं जो हमेशा गवर्नर जनरल या प्रधानमंत्री के घरों का चक्कर काटेंगे और 88 वर्ष का बूढ़ा होने पर भी यही चाहेंगे कि हमेशा के लिए जब तक कि उन्हें चिर निद्रा न मिल जाये, वह गवर्नर ही बने रहें। ये ऐसी बातें हैं जो मुझे बहुत ही व्यग्र करती है। आशा है गवर्नरों की उपलब्धियां निश्चित करने में सभा बड़ी सावधान रहेगी। किसी भी व्यक्ति के लिये इतना ही बहुत होना चाहिये कि वह राज्यपाल मनोनीत किया गया है और फिर अगर वह कांग्रेस मैन है तो उसे और भी खुश होना चाहिये और प्रसन्नतापूर्वक देश की सेवा करनी चाहिये। और अगर कांग्रेस से बाहर का कोई आदमी इस पद के लिए मनोनीत किया जाता है तो उसको तो एक बड़ा सम्मान प्राप्त हो जाता है

[श्री बी. दास]

उपलब्धियों की रकम क्या रखी जाये इसका फैसला कांग्रेस आदेशों के अनुसार होना चाहिए, चाहे वह फैसला यह सभा करे या प्रांतीय विधान मंडल करे। गवर्नरों से मैं आशा करता हूं कि उनका आचरण कांग्रेसजनों का सा होगा और वैसा नहीं जैसा कि हमारे अतीतकालीन गवर्नरों का था।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** मुझे प्रसन्नता है श्रीमान्, कि यह खंड प्राय: ज्यों का त्यों रहने दिया गया है। केवल एक बात मेरी समझ में न आ सकी। माननीय मित्र श्री कामत ने जो पक्ष प्रतिपादन किया है उसे मैं न समझ सका। हमेशा से आप इसी बात की वकालत करते आये हैं कि गवर्नर मनोनीत किये जायें। पर ऐसा मालूम पड़ता है कि मनोनीत कर देने के बाद अब आप उन्हें निकाल ही देना चाहते हैं। आप चाहते यह हैं कि राज्यपाल के पास अपना जो कुछ साधन हो उसी पर वह गुजर-बसर करे। शायद आप यह भूल जाते हैं कि मनोनीत राज्यपाल को घर से बाहर एक दूसरे प्रांत में जाना होगा जहां उसके कोई मित्र या बन्धु न होंगे। मंत्रियों के साथ यह बात नहीं है। भारत के अधिकांश प्रांतों में मंत्रियों को सरकारी तौर पर निवास स्थान मिले हुए हैं न केवल उन्हें निवास स्थान ही मिले हुए हैं बल्कि उनको फर्नीचर, परदे, मोटरकार वगैरह सभी सामान सरकारी खर्च से मिलते हैं।

श्री एच.वी. कामत: क्या मैं यह जान सकता हूं कि क्या विधान में इनका उल्लेख है?

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** विधान में इनका उल्लेख नहीं है पर इस बात की ओर मैं आ ही रहा हूं। विधान में इसका उल्लेख इसलिए नहीं है कि मंत्री लोग तो सदा बहुमत वाले दल के हाथ में रहते हैं और इसलिए जो कुछ भी वह चाहें उन्हें मिल सकता है। पर गरीब गवर्नरों की स्थिति पर तो जरा गौर कीजिये। वह एक प्रांत से दूसरे में भेजा जाता है जहां शायद वह बहुत ही कम लोगों को जानता है; जहां शायद वह खुद मिनिस्ट्री की इच्छा से प्रतिकूल प्रांत पर जबरदस्ती लाद दिया गया है। ऐसी स्थिति में छोटी से छोटी मदद जो आप उसकी कर सकते हैं वह यही है कि उसे सर रखने की जगह तो दें। अगर उसे एक सरकारी आवास स्थान प्राप्त रहेगा तो सीधे वह वहां जा सकता है जहां उसे कम से कम सर रखने की जगह तो मिल जायेगी। अपने खाने पीने का प्रबंध वह विचार बाद में कर लेगा। पर अगर उसे आवास स्थान न रहेगा तो उसे इस मित्र के पास, उस मित्र के पास, दौड़ना पड़ेगा और अन्ततोगत्वा वह किसी बड़े व्यवसायी के हाथ में पड़ जायेगा जो उसे रहने की जगह देगा। हम जानते ही हैं कि बड़े व्यवसायी ऐसे उच्च पदस्थ व्यक्तियों को शरण देने के लिये मशहूर हैं। और फिर आपका गवर्नर तो प्रांत के किसी धन कुवेर सेठ का कृतज्ञ हो जायेगा।

***डा. पी.एस. देशमुख** (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): आवास स्थान न मिलने के कारण उसे वापिस अपने प्रांत भी जाना पड़ सकता है (*हंसी*)।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** इसीलिए तो मैं कहता हूं कि गवर्नर के लिए सरकार की ओर से निवास स्थान का प्रबंध तो करना ही होगा अन्यथा उस प्रांत में अपना काम करना उसके लिए असंभव हो जाएगा।

यहां यह जो प्रावधान किया गया है कि गवर्नर का वेतन प्रांतीय विधान मंडल निश्चित करेगा वह भी एक बड़ा ही उत्तम प्रावधान है क्योंकि अगर मंत्रिमंडल एक खास गवर्नर को पसंद न करता हो तो हो सकता है वह उसके वेतन को घटाकर केवल एक रुपया कर दे और इस तरह गवर्नर को प्रांत छोड़ने पर मजबूर कर दे। यह तो एक बहुत ही उत्तम और एक ठोस संरक्षण है जो विधान में रखा जा रहा है क्योंकि विधान मंडल के बहुसंख्यक सदस्य जो कुछ करेंगे वह प्रांत की राय समझी जायेगी और अगर वह ऐसा समझते हों कि जो गवर्नर दिया गया है वह उनके प्रांत के लिए उपयुक्त नहीं है तो वह उसके वेतन को घटाकर केवल दो या एक रुपया भी कर सकते हैं जैसा कि द्वैध शासन के दिनों में हुआ था जब मंत्रियों का वेतन घटाकर एक या दो रुपया कर दिया गया था। प्रांत के हाथ में यह एक बहुत ही प्रबल अस्त्र है और मुझे खुशी है कि यह अस्त्र प्रांत की जनता के हाथ में रहने दिया गया है।

अब आता है गवर्नरों के भत्ते का सवाल। मुझे उनके भत्ते से भी दिलचस्पी है। मैं चाहता हूं कि वेतन के बाद उसको भत्ते मिलने ही चाहियें। पार्टी और दावत के लिए भी उसको रकम मिलनी चाहिये। यह भत्ता उसे इसलिए दिया जायेगा कि वह भिन्न-भिन्न लोगों को पार्टियां दे सकें—उनको डिनर पार्टी दे सके, लंच पार्टी वगैरह दे सके। मेरा तो ख्याल है कि यह भत्ता खास तौर पर उसे मिलना चाहिये और हमें यहां यह भी लिपिबद्ध कर देना चाहिये कि पार्टियों के संबंध में तरजीह दी जायेगी विधान मंडल के सदस्यों को। इस भत्ते के संबंध में दखल देने का कोई प्रयास ही नहीं किया जाता है। इसलिए गवर्नर उसका उपभोग करता है। अगर उसे पार्टी और डिनर देने के लिए रकम दी जाती है तो फिर उसे सरकार की ओर से निवास स्थान ही होना चाहिये। यह अच्छा नहीं मालूम पड़ेगा कि गवर्नर डिनर, लंच और पार्टियां भिन्न-भिन्न होटलों में देता फिरे। इसलिए कम से कम इन पार्टियों के ख्याल से ही निवास स्थान पाने का वह पात्र हो जाता है। श्री कामत इसके विरुद्ध नहीं हैं कि पार्टी वगैरह के लिए उसे भत्ता दिया जाये पर आप उसे मकान देने के खिलाफ जरूर हैं जहां वह इस रकम का सदुपयोग कर सकता है। मकान ही न रहेगा तो फिर इस रकम का वह क्या करेगा? आज गवर्नरों का सर्वप्रथम कर्त्तव्य यह है कि वे पार्टियां दें—डिनर पार्टी दे, टी पार्टी दे और इसी तरह की अन्य पार्टियां दें। अपनी सर्वप्रियता बनाये रखने के लिए मंत्रिमंडल की सर्वप्रियता बनाये रखने के लिए उसे पार्टियां देनी ही होंगी। अगर उसे कहीं कोई गलती दिखाई देगी तो फौरन वहां पहुंचकर मंत्रिमंडल के समर्थन में उसे एक भाषण दे देना होगा। इसके अतिरिक्त अन्य और भी कई समारोहों में, मसलन पारितोषिक वितरण, सम्भ्रान्त परिवारों के विवाहोत्सव जिनमें गवर्नर को उपस्थित होना ही होगा ताकि वह सर्वप्रिय बना रहे। इसलिए मेरा कहना है कि गवर्नर के आवास स्थान पाने में हमें रोड़ा न अटकाना चाहिये और इस अनुच्छेद को ज्यों का त्यों पास कर देना चाहिये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** अध्यक्ष महोदय, मैं समझता हूं कि यही उचित मौका है जबकि सभा को और खासतौर पर मसौदा समिति के सदस्यों को यह सुझाव दे दूं कि उन्हें एक-एक प्रावधान, इस आशय का, विधान में रख देना चाहिये कि एक ही व्यक्ति एक समय दो या तीन या इससे भी अधिक प्रांतों के लिए गवर्नर नियुक्त किया जा सकता है।

***अध्यक्षः** इस आशय का कोई संशोधन तो आपने पेश नहीं किया है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** मैं कोई संशोधन नहीं पेश कर रहा हूं। मैं केवल सभा को यह सुझाव दे रहा हूं कि इस अनुच्छेद में ऐसा परिवर्तन कर दे कि मेरे सुझाव की बात इसमें आ जाये। मैं यह अनुभव करता हूं कि मेरे इस सुझाव से खर्च में बड़ी कमी आ जाएगी। अगर एक ही गवर्नर कई प्रांतों के प्रशासन के लिए संविधानिक प्रमुख के रूप में जिम्मेदार बना दिया जाये तो इससे व्यय में अवश्य ही कमी आ जायेगी। बिहार, बंगाल, उड़ीसा और असम, पहले एक गवर्नर के अधीन थे ही। यह प्रांत अब फिर एक हो जायेंगे। मितव्ययिता की बात को ध्यान में रखकर ही मैं यह सुझाव दे रहा हूं।

***डा. पी.एस. देशमुखः** एक औचित्य प्रश्न है श्रीमान्। एक खंड हम इस आशय का पास कर चुके हैं कि हर प्रांत का एक गवर्नर होगा और यह सुझाव उसके सर्वथा विपरीत है (*खूब खूब*)।

***अध्यक्षः** डा. देशमुख के कथन से मैं सर्वथा सहमत हूं: हम इस आशय का एक अनुच्छेद पास कर चुके हैं कि हर प्रांत का एक राज्यपाल होगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** फिर मुझे कुछ नहीं कहना है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान्, माननीय मित्र श्री बी. दास ने राज्यपालों की उपलब्धियों के संबंध में आपत्ति की है जो इस अनुच्छेद में उल्लिखित अनुसूची में दी गई है। उच्च पदों के लिए रखी गई उपलब्धियों का जो प्रश्न है वह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। मैं नहीं समझता कि अनुसूची में रखी गई उपलब्धियों पर, इस अनुच्छेद के सिलसिले में बहस करना वाजिब होगा पर जब आपने यह निर्णय दे दिया है कि उन पर बहस की जा सकती है तो उनके बारे में मैं चन्द शब्द कह देना चाहता हूं। कांग्रेसजन होने के नाते एक निश्चित जीवनस्तर पर चलने के लिए और एक निर्धारित वेतन लेने के लिए हम प्रतिज्ञाबद्ध हैं। पर मुझे यह कहते हुए दु:ख होता है कि हम उन सभी बातों को भूल बैठे हैं जो हमने पहले कहीं थीं। कांग्रेस के कराची वाले अधिवेशन में हमने उस आशय का एक प्रस्ताव पास किया था कि उच्चतम पदाधिकारी का वेतन अधिक से अधिक पांच सौ रुपये होंगे। वर्तमान महंगाई को ध्यान में रखते हुए अब हम इसे दो हजार रुपये कर सकते हैं। परन्तु यहां हम गवर्नर के वेतन के लिए 4,500 रुपयों का प्रावधान कर रहे हैं। गरवर्नर तो केवल एक नाममात्र पदाधिकारी रहेगा जिसके कोई प्रकार्य न होंगे और जो राष्ट्रपति के प्रसाद-पर्यन्त ही पद धारण करेगा। मैं नहीं समझता कि इतनी बड़ी रकम उसके लिए जरूरी है। और फिर वेतन के अलावा उसके लिए भत्ते का ऊपर से प्रावधान है। जब संबंधित अनुसूची पर विचार किया जाने लगेगा उस समय इस संबंध में मैं और भी कहूंगा। पर यहां मैं केवल इतना ही कहूंगा कि इस अनुच्छेद को स्वीकार करने का अर्थ यह नहीं है कि अनुसूची में जो रकम नियत की गई है उसे हम स्वीकार कर रहे हैं।

***श्री एम. थीरूमाला राव:** अध्यक्ष महोदय, मैं इस धारणा में था कि मसौदा समिति का संशोधन नं. 2100 पेश किया जायेगा जो इस आशय का है कि:

''अनुच्छेद 135 के खंड (3) के साथ निम्नलिखित परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'परन्तु राज्यपाल की उपलब्धियां चार हजार पांच सौ रुपये से कम न होंगी।' ''

मेरा ख्याल है कि राज्यपालों के वेतन और उपलब्धियों के संबंध में हमें एक समान नीति यहां अपनानी चाहिये जैसा कि मेरी समझ से आजकल है। उस मसले को सम्बन्धित विधान मंडल की मरजी पर छोड़ने में कोई फायदा नहीं है क्योंकि गवर्नरों का वेतन तय करने में यह विधान मंडल कई बातों से प्रभावित होंगे। अगर आवश्यक हो तो हमें इस पद की कई श्रेणियां कर देनी चाहिये जैसे कि प्रथम श्रेणी का राज्यपाल, द्वितीय श्रेणी का राज्यपाल और प्रांत की आमदनी के हिसाब से यह श्रेणी निर्धारित की जाये। पर इनके वेतन के प्रश्न को सर्वथा विधान मंडलों पर छोड़ देना ठीक न होगा। गवर्नरों के संबंध में यह ख्याल किया जाता है कि उनको विधान मंडलों और मंत्रियों पर कोई अधिकार तो न रहेगा पर उनका ओहदा उनसे ऊंचा रहेगा। राज्यपालों को, जनता की दृष्टि में अपनी एक मर्यादा और प्रतिष्ठा को बनाये रखना है। इसलिये उनके वेतन के प्रश्न को बतौर खिलौने के विधान मंडलों के हाथ में न दे देना चाहिए जहां उसकी उपलब्धियों को घटाने में भिन्न-भिन्न दलों का अपना कोई मतलब होगा। मैं तो यह कहूंगा श्रीमान्, कि राष्ट्रपति और राज्यपाल दोनों के वेतन और भत्ते के लिए विधान में एक रकम नियत कर दी जानी चाहिये ताकि विधान मंडलों के प्रभावाधीन यह प्रश्न न रह जाये। मैं चाहता हूं कि मसौदा-समिति इस मसले पर गौर करे और इसके बारे में एक-एक समुचित संशोधन पेश करे।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं इस संबंध में आपका निर्णय चाहता हूं श्रीमान्, कि मेरा संशोधन क्यों नहीं पेश हो सकता है। अनुच्छेद 149 में कहा गया है कि हर प्रांत का एक राज्यपाल होगा। इसका केवल यही मतलब हुआ कि कोई प्रांत बिना राज्यपाल के न होगा। इस अनुच्छेद से इस पर रोक नहीं आती है कि एक ही व्यक्ति एक समय एकाधिक प्रांत का राज्यपाल नियुक्त किया जाये।

***अध्यक्ष:** निर्णय का प्रश्न नहीं उठता है क्योंकि माननीय सदस्य ने अपना संशोधन ही नहीं पेश किया।

अब मैं संशोधनों पर राय लेता हूं। पहला संशोधन है डा. अम्बेडकर का।

''कि अनुच्छेद 135 के खंड (1) में 'न तो संसद का और न प्रथम अनुसूची में उस समय उल्लिखित रहे किसी राज्य के विधान मंडल का' शब्दों की जगह 'न संसद के किसी सदन का और न प्रथम अनुसूची में उस समय उल्लिखित रहे किसी राज्य के विधान मंडल के सदन का' शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 135 के खंड (1) में—

(क) 'संसद का या किसी राज्य के विधान मंडल का' शब्दों की जगह 'संसद के किसी सदन का अथवा किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का' शब्द रखे जायें।

(ख) 'सदन का अथवा उस विधान मंडल का अपना स्थान, जैसी भी स्थिति हो' शब्दों की जगह 'उस सदन का अपना स्थान' शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 135 के खंड (2) में, 'परिलाभ का अन्य कोई पद अथवा स्थिति' शब्दों की जगह 'लाभ का अन्य कोई पद' शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है

''कि अनुच्छेद 135 के खंड (3) में 'राज्यपाल के लिए पदावास रहेगा और' (The Governor shall have an official residence, and) शब्दों को हटा दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकृत रहा।

***अध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 135 को इसके संशोधित रूप में विधान का अंग समझा जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 135 को संशोधित रूप में विधान में शामिल किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रो. शाह ने इस आशय के एक संशोधन की सूचना भेजी है कि अनुच्छेद 135 के बाद एक नया अनुच्छेद जोड़ा जाये।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** दूसरा अनुच्छेद लेने से पूर्व मैं यह सुझाव देना चाहता हूं कि अनुच्छेद 135 में 'निर्वाचित' (elected) शब्द निकाल दिया जाये।

***अध्यक्ष:** यह तो एक मानी हुई बात है।

नया अनुच्छेद 135-क

***प्रो. के.टी. शाहः** मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं श्रीमान्।

''कि अनुच्छेद 135 के बाद निम्नलिखित नया अनुच्छेद 135 (क) जोड़ा जाये:

'प्रत्येक राज्यपाल को, अपनी पदावधि को पूर्ण कर लेने और निवृत्त होने पर, ऐसा निवृत्ति वेतन और भत्ता दिया जायेगा जैसा कि राज्य का विधान मंडल विधि द्वारा प्रावहित करे।'

'पर ऐसे किसी राज्यपाल के जीवनकाल में, जो कि निवृत्त हो चुका हो, उसके स्वीकृत निवृत्ति वेतन और भत्ते में ऐसा परिवर्तन न किया जायेगा जो उसके प्रतिकूल हो।'

'पर यह भी कि ऐसा निवृत्ति वेतन उसे इसी शर्त्त पर दिया जायेगा कि राज्यपाल निवृत्त होने पर उस राज्य में या भारत सरकार के अधीन कोई लाभ का पद नहीं धारण करता है।' ''

इस संशोधन से मेरा यही अभिप्राय है श्रीमान्, कि भारत की लब्ध-प्रतिष्ठ संतानों और प्रख्यात जनसेवकों को जो उन्नति करके राज्यपाल पद पर पहुंच जायें उन्हें निवृत्त होने पर एक समुचित निवृत्ति से वेतन और भत्ता सुनिश्चित रूप से प्राप्त हो सके ताकि वे किसी अभाव या मोहताजी में न पड़ सकें या ऐसे किसी प्रलोभन में न पड़ जायें जिसके वशीभूत होकर अपने गत पदावधि में अर्जित प्रभाव का उपयोग अवांछनीय रूप से करें।

राज्य के ऐसे उच्च पदों पर पहुंचने वालों के लिए, इन सब बातों का ख्याल करके विधान में कोई प्रावधान नहीं किया गया है। हां एकमात्र न्यायपालिका के संबंध में इन सब बातों का ख्याल रखते हुए प्रावधान विधान में अवश्य किया गया है। जहां तक मेरा मन है, मैं कोई कारण नहीं देखता कि ऐसे प्रतिष्ठित पदाधिकारियों और सरकारी कर्मचारियों के लिए शेष जीवन के लिये, जिन्होंने कि राज्य और देश की सेवा, राष्ट्रपति और राज्यपाल जैसे विशिष्ट पदों पर रहकर की है, कोई ऐसी व्यवस्था क्यों न विधान में प्रावहित कर दी जाये ताकि वह किसी अभाव से मुक्त रहें और प्रलोभन में पढ़कर अपने प्रभाव का उपयोग अवांछनीय रूप से न करें।

निवृत्ति वेतन किस पैमाने पर दिया जाये इसका उल्लेख मैंने नहीं किया है और जानबूझकर नहीं किया है। निवृत्ति वेतन के संबंध में मैंने एक शर्त भी सुझाई है कि वह तभी दिया जायेगा जब कि संबंधित व्यक्ति सेवा से निवृत्त हो जाये यानी अवकाश ग्रहण कर ले। अर्थात् यह निवृत्ति वेतन उसे तभी दिया जायेगा जबकि वस्तुतः अपने अवशिष्ट जीवनकाल में अभाव से मुक्त रहकर वह देश की सेवा में ही अवैतनिक रूप से लीन रहे और उस राज्य में जिस में वह राज्यपाल रह चुका है अथवा भारत सरकार के अधीन लाभ के किसी पद को धारण न करता हो। अवश्य ही अगर वह कोई ऐसा पद धारण करता है जिसके साथ उपलब्धियां हैं, तो उसे निवृत्ति वेतन और इन उपलब्धियों में से एक

[प्रो. के.टी. शाह]

को चुन लेना होगा। पर इस शर्त से अधीन रहते हुए वह लाभ का अन्य कोई पद धारण नहीं करता है, निवृत्त होने पर उसे शेष जीवन के लिये निवृत्ति वेतन मिलना ही चाहिये। जिन लोगों ने राज्य की दक्षतापूर्वक सेवा की है उनको अवशिष्ट जीवन के लिए, इस दलबंदी की दुनिया में, राज्य द्वारा निवृत्ति वेतन की प्रतिभूति का प्रावधान होना ही चाहिये, उनकी सर्वथा उपेक्षा न होनी चाहिये।

मैं तो यह मानता हूं श्रीमान्, कि कोई भी ऐसा व्यक्ति राज्यपाल नियुक्त या निर्वाचित न किया जाएगा जिसने नियुक्ति के पहले भी ऐसी सेवा न की जो जिससे कि उसे ख्याति मिली हो, सार्वजनिक जीवन में प्रतिष्ठा की स्थिति प्राप्त हुई हो जिसके आधार पर कि राज्यपाल निर्वाचित होने के लिये वह योग्य समझा जाये। ऐसी दशा में ऐसे उच्च पदों पर काम करने वालों के लिए प्रतिभूति का प्रावधान उसी उद्देश्य से किया जा रहा है जिस उद्देश्य से कि सभी सभ्य देशों में कर्मियों के लिये बुढ़ापे की पेंशन की प्रतिभूति दी जाती है और पेंशन की रकम इस हिसाब से निर्धारित की जाती है कि शेष जीवन में भी वह अपने उसी जीवनस्तर का निर्वाह कर सके जिसका कि कार्यकाल में वह आदी हो चुका था। निवृत्ति वेतन ऐसा वेतन है जो कर्मी को उसके कार्यकाल में नहीं दिया जाता है पर कार्य से अवकाश ग्रहण करने पर उसे दिया जाता है और यही बात यहां भी लागू है। राज्यपाल का काम भी एक काम ही है और शायद अपने ढंग का विशिष्टतम काम है। जबकि उसकी सेवायें इतनी विशिष्ट होती हैं कि उनकी चरम परिणति के फलस्वरूप ही वह राज्यपाल नियुक्त किया जाता है तो मेरी समझ से उचित यही है कि उन सेवाओं को, ऐसे ही किसी रूप से जैसा कि मैं सुझा रहा हूं, मान्यता दी जाये तथा पुरस्कृत किया जाये। जैसा मैं पहले कह चुका हूं, यह जरूरी नहीं है कि भत्ते और निवृत्ति वेतन की दर भी विधान में प्रावहित की जाये। जरूरी इतना ही है कि इस सिद्धांत को मंजूर कर लिया जाये इस संबंध में आवश्यक प्रावधान करने की व्यवस्था राज्य के विधान-मंडल पर छोड़ दी जाये। पर इस शर्त के साथ कि विधि द्वारा जो भी प्रावधान एक बार कर दिया जायेगा उसमें ऐसा परिवर्तन फिर न किया जायेगा जो निवृत्ति पाने वाले अवकाश ग्रहीत व्यक्ति के प्रतिकूल हो। मेरी समझ से, मेरा यह प्रस्ताव एक बहुत ही सरल और समुचित प्रस्ताव है पर सभा यदि स्वीकार कर ले।

***डा. पी.एस. देशमुखः** मेरे माननीय मित्र प्रो. के.टी. शाह यह चाहते हैं श्रीमान्, कि राज्यपालों के लिये निवृत्ति वेतन की व्यवस्था कर दी जाये। जो दृष्टिकोण उन्होंने सभा के समक्ष रखा है उसके प्रति मुझे बड़ी सहानुभूति है क्योंकि आमतौर पर यही होगा—अवस्था विशेष में कभी कोई अपवाद भी हो सकता है—कि इन पदों के लिए हम देश के सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं में से किसी को चुनेंगे और सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं में बहुत ही कम ऐसे व्यक्ति मिलेंगे जिनके पास कोई पर्याप्त रकम बैंक में हो या कोई बड़ी सम्पत्ति हो। इसलिये मैं समझता हूं कि एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ता के लिये एक ऐसा प्रावधान करने के पक्ष में सभी कुछ कहा जा सकता है। अपने जीवन के अन्तिम भाग में ही कोई सार्वजनिक कार्यकर्त्ता राज्यपाल पद पर इस विधान के अधीन राष्ट्रपति द्वारा आसीन किया जायेगा पर अपनी पदावधि की समाप्ति पर अब वह निवृत्त होगा तो उसके जीवन

निर्वाह का कोई सहारा न रहेगा। पर इस सभी सहानुभूति के बावजूद भी अगर हम इस संशोधन को स्वीकार करते हैं तो हमें यह मानना पड़ेगा कि इससे कई कठिनाइयां खड़ी हो जायेंगी। सबसे पहली कठिनाई तो यह होगी कि आप उसकी पदावधि क्या रखेंगे। मान लीजिये राज्यपाल का स्थान रिक्त होने पर किसी को आप उसकी जगह नियुक्त करते हैं और वह शेष पदावधि को जो 6 महीने, एक वर्ष या दो वर्ष की है, समाप्त कर लेता है। प्रो. शाह का क्या यह मतलब है कि ऐसे व्यक्ति को भी अनुपात के हिसाब से एक पेंशन मिलनी चाहिये या उसके लिये आप अन्य कोई व्यवस्था प्रस्तावित करेंगे? दूसरे, मैं नहीं समझता कि कहीं भी और कभी भी ऐसी व्यवस्था बरती गई है या उन लोगों ने जो सौभाग्य से इस पद पर आसीन किये गये हैं कभी इसकी मांग की है। कुल मिलाकर, मेरा ख्याल है लाभ इसी में है कि निवृत्ति वेतन की व्यवस्था न की जाये। मेरे प्रोफेसर मित्र ने यह तर्क अवश्य रखा है कि पुरस्कार के रूप में ही यह निवृत्ति वेतन उसे मिलेगा और अगर वह लाभ का कोई पद धारण कर लेता है तो किसी निवृत्ति वेतन का वह अधिकारी न रह जायेगा। पर मेरा ख्याल यह है कि जो सार्वजनिक कार्यकर्त्ता उस पद के लिये अपनी सेवायें देना चाहेगा उसे, अपनी पदावधि काल में जो भी वेतन मिलेगा उसी पर संतोष करना होगा और निवृत्ति वेतन की उसे कोई आशा नहीं रखनी चाहिये। अगर हम इनके लिये निवृत्ति वेतन का प्रावधान करते हैं तो फिर हमें राजदूतों और कमोवेशी इसी श्रेणी के अन्य कई लोगों के लिए भी निवृत्ति वेतन देने के प्रश्न पर विचार करना होगा। फिर तो सभी लोग निवृत्ति वेतन का दावा करने लग जायेंगे और हमारे राजस्व की एक बड़ी रकम सिर्फ इसी निवृत्ति वेतन में ही खर्च हो जायेगी। सैद्धांतिक दृष्टि से भी मैं इसे अच्छा नहीं समझता हूं, इसलिये मैं इसका विरोध करता हूं।

***सरदार हुकूम सिंहः** (पूर्वी पंजाब सिख): मैं इस प्रस्ताव का विरोध करने के लिए खड़ा हुआ हूं। मैं यह महसूस करता हूं कि राज्यपालों को निवृत्ति वेतन देने में कोई औचित्य नहीं है। हमें यह बताया गया है कि ये राज्यपाल केवल नाममात्र के प्रमुख हैं, केवल शोभार्थ हैं और इनको कोई शक्ति और अधिकार नहीं रहेंगे। जिस तरह से हम चल रहे हैं उससे मैं समझता हूं कि हम राज्यपालों को उन सभी अधिकारों से वंचित रख रहे हैं जो कि उन्हें राज्य या प्रांतों में प्राप्त रह सकते हैं। सभी शक्तियां केन्द्र में ही सन्निहित रखी जा रही हैं। अवशिष्ट विषयों को भी केन्द्र के ही हवाले किया गया है। ऐसी स्थिति में, जबकि राज्यपालों को कुछ करना धरना ही न रहेगा, जब केवल संवैधानिक प्रतीक के रूप में रहेंगे और केवल शोभार्थ रहेंगे तो उन्हें साढ़े चार हजार का वेतन, अन्य उपलब्धियां, भोजादि देने के लिये भत्ता पदावास और अन्य सुविधायें देकर उन्हें हमने बहुत कुछ दे दिया है। इतना सब कुछ देने के बाद भी अब प्रो. शाह ये चाहते हैं कि उन्हें निवृत्ति वेतन भी दिया जाए ताकि पद से निवृत्त होने पर ये लोग शाही जिंदगी बिता सकें।

मैं इस संशोधन के विरुद्ध हूं। राज्यपालों को ऊपर से निवृत्ति वेतन दिया जाये इसमें कोई औचित्य मुझे तो नहीं दिखाई देता है क्योंकि ये लोग नाममात्र के प्रमुख रहेंगे और प्रांतों या राज्यों में इनकी कोई शक्ति न रहेगी।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 135 के बाद निम्नलिखित नया अनुच्छेद 135 (क) जोड़ा जाये:

'135-क 'प्रत्येक राज्यपाल को अपनी पदावधि को पूर्ण कर लेने और निवृत्त होने पर ऐसा निवृत्ति वेतन और भत्ता दिया जायेगा जैसा कि राज्य का विधान मंडल विधि द्वारा प्रावहित करे।'

'परन्तु ऐसे किसी राज्यपाल के जीवनकाल में, जो निवृत्त हो चुका हो, उसके स्वीकृत निवृत्ति वेतन और भत्ते में ऐसा परिवर्तन न किया जायेगा जो उसके प्रतिकूल हो।'

'पर यह भी कि ऐसा निवृत्ति वेतन उसे इसी शर्त पर दिया जायेगा कि राज्यपाल निवृत्त होने पर उस राज्य में या भारत सरकार के अधीन कोई लाभ का पद नहीं धारण करता है।' ''

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 136

***अध्यक्ष:** एक संशोधन है जिसकी सूचना डा. अम्बेडकर ने दी है। यह है संशोधन नं. 2104, और भी संशोधन हैं जो कमोबेशी इसी आशय के हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** सूची नं. 2 में जो मेरा संशोधन नं. 132 है वह करीब-करीब वैसा ही है जैसा कि अनुच्छेद 49 जिसे सभा पास कर चुकी है।

***अध्यक्ष:** पहले संशोधन पेश हो जाये तब हम संशोधन नं. 132 को ले सकते हैं। डा. अम्बेडकर, तो फिर मैं मान लूं कि आपने अपना संशोधन नं. 2104 पेश कर दिया है?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं उसे पेश कर रहा हूं श्रीमान्। वह यों है:

''कि अनुच्छेद 136 में 'इस राज्य के विधान मंडल के सदस्यों के समक्ष' शब्दों की जगह 'मुख्य न्यायाधिपति के समक्ष अथवा उसकी अनुपस्थिति में, उस राज्य के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश के समक्ष' शब्द रखे जायें।''

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं श्रीमान्:

''कि संशोधन सूची के संशोधन नं. 2106 के स्थान पर निम्नलिखित संशोधन रखा जाये:

'कि अनुच्छेद 136 में 'उस राज्य के विधान मंडल के सदस्यों के समक्ष' शब्दों की जगह 'उस राज्य के संबंध में क्षेत्राधिकार प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति के अथवा उसकी अनुपस्थिति में, न्यायालय के प्राप्य अग्रतम न्यायाधीश के समक्ष' शब्द रखे जायें।' ''

इसके लिये किसी विशेष व्याख्या की आवश्यकता नहीं है क्योंकि, जैसा मैं कि कह चुका हूं। इसका भी स्वरूप करीब वैसा ही है जैसा कि अनुच्छेद 49 का जिसे सभा पास कर चुकी है। राज्यपाल के चुनाव के लिये आपने अब जो दूसरी व्यवस्था निश्चित की है उसको देखते हुए यह उचित नहीं होगा कि राज्यपाल विधान मंडल के सदस्यों के समक्ष शपथ ग्रहण करे। उचित यही होगा कि उस राज्य के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति ही इस प्रकार्य को सम्पादित कराये अथवा उसकी अनुपस्थिति में उस उच्च न्यायालय का प्राप्य अग्रतम न्यायाधीश इसे सम्पादित कराये।

इन शब्दों के साथ मैं अपना संशोधन उपस्थित करता हूं श्रीमान्।

(संशोधन नं. 2105 और 2107 पेश नहीं किये गये।)

***श्री एच.वी. कामतः** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं श्रीमान्:

''कि अनुच्छेद 136 में 'मैं अमुक गंभीरतापूर्वक निश्चयोक्ति करता (शपथ लेता) हूं' शब्दों की जगह निम्नलिखित शब्द रखे जायें:

''मैं अमुक $\frac{\text{ईश्वर के नाम पर शपथ लेता हूं।}}{\text{गम्भीरतापूर्वक निश्चयोक्ति करता हूं।}}$ शब्द रखे जायें।''

संविधान के प्रारूप के अनुच्छेद 49 के अधीन राष्ट्रपति जो निश्चयोक्ति करेगा या जो शपथ लेगा उसके संबंध में सभा ने एक संशोधन स्वीकार किया है और उसको देखते हुए एकरूपता के ख्याल से यह संशोधन रखा जा रहा है।

उस मौके पर जबकि उक्त संशोधन यहां पास हुआ था आप सभापति के आसन पर मौजूद नहीं थे श्रीमान्। तब आप वर्धा में रुग्ण पड़े थे। प्रसन्नता की बात है कि ईश्वर की दया से आप शीघ्र स्वस्थ हो गये जिसके फलस्वरूप हमें यह सौभाग्य प्राप्त हो सका कि सभा के कार्य संचालन के लिये सभापति के आसन पर पुनः हम आपको आसीन पा सके।

मैं कोई लम्बी वक्तृता नहीं देना चाहता हूं क्योंकि मुझे जो कुछ भी इस संबंध में कहना था उस मौके पर कह चुका हूं। इस समय मैं केवल इतना ही कहूंगा कि किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा ली जाने वाली शपथ या की जाने वाली निश्चयोक्ति के संबंध में अगर हम यह संशोधन स्वीकार कर लेते हैं तो हम अपनी परम्परा एवं आध्यात्मिक प्रवृत्ति के प्रति अपनी निष्ठा ही ज्ञापित करते हैं। मैं सभा से सिफारिश करता हूं कि वह इस संशोधन को स्वीकार करे।

***अध्यक्षः** संशोधन नं. 2107, 2108 और 2109 मेरा ख्याल है, नहीं पेश किये जा रहे हैं उपस्थित किये गये संशोधनों के संबंध में उत्तर के रूप में क्या डा. अम्बेडकर कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्री टी.टी. कृष्णमाचारी और माननीय मित्र श्री कामत के संशोधनों को मैं स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधन सूची के संशोधन नं. 2104 के स्थान पर निम्नलिखित संशोधन रखा जाये:

'कि अनुच्छेद 136 में ''उस राज्य के विधान मंडल के सदस्यों के समक्ष'' शब्दों की जगह ''उस राज्य के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति के अथवा उसकी अनुपस्थिति में उस न्यायालय के प्राप्य अग्रतम न्यायाधीश के, समक्ष'' शब्द रखे जायें।' ''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधन सूची के संशोधन नं. 2106 के स्थान पर निम्नलिखित संशोधन रखा जाये:

'कि अनुच्छेद 136 में ''मैं अमुक गंभीरतापूर्वक निश्चयोक्ति करता (शपथ लेता) हूं'' शब्दों की जगह निम्नलिखित शब्द रखे जायें:

''मैं अमुक $\frac{\text{ईश्वर के नाम पर शपथ लेता हूं।}}{\text{गम्भीरतापूर्वक निश्चयोक्ति करता हूं।'}}$ ''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** (संयुक्तप्रांत : जनरल): शपथ पढ़ी कैसे जाएगी ? इसी तरह तो:–'मैं ईश्वर के नाम पर शपथ लेता हूं या गंभीरतापूर्वक निश्चयोक्ति करता हूं? अब सवाल यह उठता है कि कुछ लोग यह कहेंगे कि गवर्नर ईश्वर के नाम पर शपथ ले। पर हमारे देश में ऐसे भी लोग हो सकते हैं जो नास्तिक हों (*बाधा*) (अध्यक्ष शपथ पढ़ कर सुनाते हैं) अच्छा यह विकल्प के रूप में रखा गया है। यही मैं जानना चाहता था। किसी को जो ऐसा नहीं करना चाहता है इसके लिए बाध्य नहीं किया जाना चाहिये कि यह ईश्वर के नाम पर ही शपथ ले।

***अध्यक्षः** नहीं, नहीं, ऐसा नहीं होगा

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 136 संशोधित रूप में विधान का अंग माना जाये''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 136, संशोधित रूप में विधान में शामिल किया गया।

इसके पश्चात् सभा बुधवार तारीख 1 जून सन् 1949 ई. के प्रातः 8 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

———